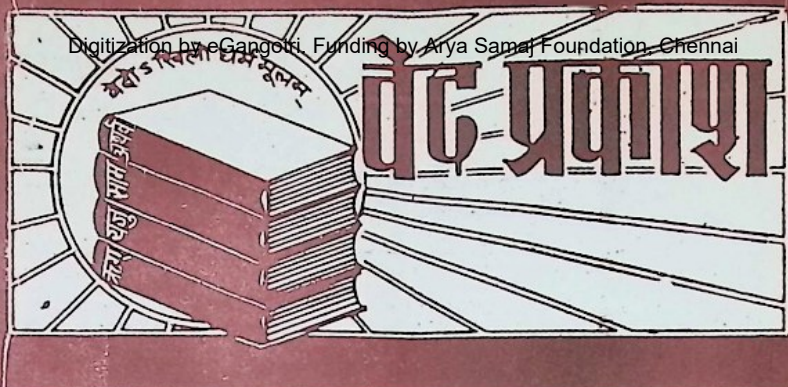




सत्य और संयम से सुख-शान्ति

शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु
 शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः।
 शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः
 शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु॥

ऋग्वेद ७।२५।२

मानव-जीवन में सुख और शान्ति की प्राप्ति ही प्रत्येक मनुष्य का लक्ष्य होता है। सुख और शान्ति की प्राप्ति के कुछ साधन हैं। इन साधनों को अपनाने से जीवन में सुख और शान्ति की वर्षा होती है। इन साधनों में प्रमुख हैं—सत्य और संयम। सत्य से जीवन में स्थिरता आती है, कुण्ठा का हास होता है, उदारता की जागृति होती है, सद्भावना की अभिवृद्धि होती है। इस प्रकार सत्य सुख और शान्ति के लिए उर्वरा भूमि तैयार करता है। इस उर्वरा भूमि में संयम का बीज बोना होता है। आसक्ति और विषय-वासना को छोड़ना होता है।

सत्य के साथ संयम को जोड़ना सुख-शान्ति की कुंजी को पाना है। मन्त्र में इसीलिए सत्य और संयम की प्रशंसा को जीवन के लिए कल्याणकारी बताया गया है। इसके द्वारा प्राप्त होने वाली सभी समृद्धियाँ फिर सुख का ही साधन हो जाती हैं।

बोध-कथा

छत्रपति शिवा जी के हाथी

छत्रपति शिवा जी एक बार अपनी राजधानी रायगढ़ से चल कर अपनी पैतृक जागीर तंजौर में अवस्थित अपने सौतेले भाई व्यंकोजी से मिलने गए। रास्ते में निजाम हैदराबाद की रियासत पड़ती थी। जब निजाम को सूचना मिली कि शिवा जी राज्य से गुजर रहे हैं तब उन्होंने छत्रपति को रियासत में आने का न्योता दिया। उन दोनों शासकों में मैत्री थी। निजाम ने अपने बड़े वजीर मादन्ना को छत्रपति के पास भेजा। शिवा जी निजाम का न्योता स्वीकार कर हैदराबाद की पुरानी राजधानी भाग्य नगर पहुंचे। निजाम की फौज में उस समय के सब से ताकतवर और चुने हुए हाथी थे। निजाम अपने हर मेहमान को अपने ये हाथी बड़े गर्व से दिखाता था, वह छत्रपति को उन्हें दिखाने ले गया। उसने अपने दरबार के दरवाजे पर बहुत स्वस्थ, कद्दावर ऊँचे डीलडौल के २५ हाथी खड़े करवा दिए। जैसे ही शिवा जी ने अपना आसन लिया, निजाम ने हाथियों की ओर इशारा करते हुए कहा—“महाराज, आपकी फौज में ऐसे उम्दा कितने हाथी हैं ?”

शिवा जी ने तुरन्त जवाब दिया—“अगर आप इजाजत दें तो कुछ पलों में अपने कुछ श्रेष्ठ बेमिसाल हाथी यहाँ मंगवा देता हूँ, फिर आप खुद ही फैसला कर लें कि कौन बढ़िया है?” निजाम के हामी भरते ही छत्रपति ने अपने अमले के एक आदमी के कान में कुछ गनगुनाया। वह आदमी तुरन्त शिवा जी के खेमे की ओर खाना हो गया और कुछ ही समय बाद लौटा तो उसके पीछे येसाजी कंक, बाजी फसलकर, नाना जी मालुसरे, पालक घोरपड़े जैसे अपने समय के परखे हुए बहादुर सेनापतियों के साथ सौ बहादुर, लड़ाकू, योद्धाओं की एक टुकड़ी कवायद करती वहाँ आ पहुँची। दरबार में घुसते ही उन्होंने झुककर छत्रपति शिवा जी का अभिवादन किया और उनके आदेश की प्रतीक्षा में हाथ जोड़ कर सामने तैनात हो गए। उन हृष्ट पुष्ट, जांबाज, चुने हुए युवक योद्धाओं की टोली की ओर इशारा करते हुए छत्रपति ने निजाम से कहा—“ये रहे मेरे हाथी। बतलाइए आपकी फौज में मुल्क और कौम के लिए कुर्बान होने वाले ऐसे कितने हाथी हैं ?”

वीरों की उस टोली को देख कर निजाम की बोलती बन्द हो गई और वह बुरी तरह झेंप गया।

—नरेन्द्र विद्यावाचस्पति

वेदप्रकाश

संस्थापक : स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द

वर्ष ४६, अंक ३ वार्षिक मूल्य : बीस रुपये अक्टूबर १९६६
सम्पा. अजयकुमार आ. सम्पादक : स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

वैदिक संस्कृति के पाँच आधार-स्तम्भ (ऋषियों की खोज)

—डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

१. मनुष्य ने प्रकृति पर विजय पा ली है—आज मनुष्य प्रकृति पर विजय पाकर खड़ा है। कोई समय था जब मनुष्य निस्सहाय था, उसके पास साधन बहुत थोड़े थे। आज प्रकृति पर विजय पाकर उसके पास हर तरह के साधन हो गये हैं। विज्ञान ने मनुष्य को शक्तिशाली बना दिया है। पहले वह बैलगाड़ी पर चलता था, अब मोटर और विमान पर चलता है। पहले मिट्टी का दीया जलाता था, अब बिजली से काम लेता है। पहले जिन बातों के लिये महीनों लग जाते थे, अब उनके लिये बटन दबाना काफी है। नये-नये आविष्कारों से नयी-नयी मशीनें बन गई हैं जिनके जरिये वह प्रकृति का स्वामी बन गया है। आज वह चाँद तक पहुँच गया है, दूसरे तारों तक उड़ान लेने के स्वप्न ले रहा है।

२. विजयी मनुष्य के सामने प्रश्न—आज मनुष्य ने विज्ञान के सहारे विजय प्राप्त की है, आज से पहले सिकन्दर ने भी एक तरह की विजय प्राप्त की थी। वह अपनी फौजें लेकर दुनिया पर विजय पाने के लिये निकल पड़ा था। जिस देश में जाता, उस देश के लोग उसकी अक्षौणी सेना को देखकर हथियार रख देते और वह आगे बढ़ जाता। उसने भारत पर भी हमला किया और भारत को जीत लिया। उसका गुरु अरस्तु था। जब वह भारत को जीतने के लिये चला था तब उसने अपने गुरु से पूछा था—मैं वहाँ से तुम्हारे लिये क्या तोहफ़ा लाऊँ ? अरस्तु ने कहा था—वहाँ से कोई सन्त लेते आना, क्योंकि वे लोग विचारों में बहुत ऊँचे पहुँचे हुए हैं। ग्रीस लौटते हुए उसे स्मरण हो आया कि उसके गुरु ने भारत से किसी सन्त को ले आने के लिए कहा था। उसे मालूम हुआ कि जहाँ उसका डेरा पड़ा है, वहीं एक सन्त रहते हैं। उसने अपने दूत उस सन्त के पास भेजे और साथ चलने के लिए कहा। सन्त धूप में बैठे आराम कर रहे थे। उन्होंने उन दूतों से कहा—परे हट जाओ, तुम्हारी छाया से मुझ पर धूप आने में बाधा पड़ रही है। दूतों ने सिकन्दर का सन्देश सुनाया, सन्त ने सिर हिला दिया—हम नहीं चल

सकते। सिकन्दर के पास जब यह उत्तर पहुँचा तो वह स्वयं आया। सिकन्दर ने कहा—क्या मालूम है तुम्हें कि मैं कौन हूँ? मैं सिकन्दर हूँ, मेरे सामने इन्कारी? मैं चाहूँ तो तुम्हें अभी तलवार के घाट उतार सकता हूँ। प्लुटार्क का, जिसने इस घटना का उल्लेख किया है और जिसे ग्रीस इतिहास के लेखक प्लिनी ने उद्धृत किया है, कहना है कि सिकन्दर की धमकी सुनकर सन्त ने मुस्करा दिया और कहा—तुम किस को मार सकते हो? यह शरीर मैं नहीं हूँ। मेरा शरीर वह खोल है जिसके भीतर मेरा आत्मा बैठा है। आत्मा नित्य है, वह मर नहीं सकता। यह उत्तर सुनकर सिकन्दर का सिर झुक गया। उसने कहा—मैंने दुनिया-भर को जीता, परन्तु इस सन्त ने मुझे जीत लिया। सिकन्दर ने सब जगह जीत देखी, परन्तु भारत के इस सन्त के सामने हार स्वीकार की।

३. जीत और हार का पैमाना बाहर की जीत नहीं, भीतर की जीत है—जीत और हार का पैमाना क्या है? भारत की संस्कृति का कहना है कि जीत और हार का पैमाना मनुष्य के बाहर नहीं, उसके भीतर है। यह ठीक है कि तुमने विज्ञान को अपना दास बनाकर हवाई जहाज बनाये, परन्तु अगर उन हवाई जहाजों पर चढ़कर, उनमें हाइड्रोजन बम भरकर तुमने मानव-जाति का संहार करना शुरू कर दिया, तो तुम भले ही कहते रहो कि तुम जीत गये, परन्तु भारत के ऋषियों के पैमाने से तुम हार गये, मानवता के पैमाने से हार गये। भले ही तुमने सिकन्दर की तरह देश-पर-देश जीत लिये, परन्तु भारत के उस सन्त के पैमाने से, जिसने सिकन्दर को धिक्कारा था, तुम हार गये। असली जीत बाहर की जीत नहीं, भीतर की जीत है; तुम्हारा असली शत्रु बाहर नहीं, भीतर बैठा है। सिकन्दर ने सब-कुछ जीत लिया था किन्तु भीतर का शत्रु नहीं जीता था, इसीलिये भारत के सन्त के सामने, जिसके पास लँगोटी के सिवाय कुछ नहीं था, उसका सिर झुक गया।

४. भीतर का शत्रु तथा भीतर का मित्र कौन है?—भीतर का शत्रु काम है, क्रोध है, लालच है, लालसा है, भूठ है, बेईमानी है, दुराचार है, बेइन्साफ़ी है। मनुष्य कितने ही आविष्कार क्यों न कर ले, कितना ही बड़ा साम्राज्य क्यों न खड़ा कर ले, जब तक उसके भीतर शत्रु बैठे हैं तब तक बाहर की जीत जीत नहीं, हार है। हार इसलिये है क्योंकि जितना ही वह लालच और लालसा से, भूठ और बेईमानी से बाहर का सामान जुटाता जायगा, उतना ही उसका लालच, उसकी लालसा, उसकी बेईमानी, उसकी दूसरों का खून पीने की प्यास बढ़ती जायगी। जीत तो तभी होगी जब जिस प्यास को बुझाने तुम निकले हो, वह प्यास बुझ जायगी। क्या सिकन्दर की प्यास बुझी? क्या नेपोलियन की प्यास बुझी? क्या हिटलर और मुसोलिनी की प्यास बुझी? ये सब अपनी लालसा की प्यास में ही डूब गये। बाहर का सामान जितना लादते रहे, उतना ही भीतर से

प्रश्न है कि क्या कोई रास्ता है जिससे मनुष्य भीतर के इन शत्रुओं को, जो उसे सब-कुछ पा लेने पर भी कंगाल बनाये रखते हैं, जीत सके ? इसका उत्तर भारत की संस्कृति के पास है । उसका कहना है कि है ऐसा रास्ता !

५. पतंजलि के पाँच यम—योग-दर्शन के रचयिता पतंजलि मुनि का कहना है कि एक ऐसा रास्ता है जिस पर चलने से मनुष्य की लालसा की प्यास मिट सकती है । वह रास्ता है—अपने तथा मानव-समाज के जीवन के भवन को वैदिक संस्कृति के उन पाँच आधार-स्तम्भों पर खड़ा कर देना, जिनकी नींव पाताल तक तथा चोटी हिमालय के शिखर तक चली गई है । इन आधार-स्तम्भों को पतंजलि मुनि ने अपने ग्रन्थ में 'यम' का नाम दिया है । ये पाँच यम हैं—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह । इन्हीं को 'योग' भी कहा गया है । इनका क्या अर्थ है ?

मनु ने कहा है :

यमान् सेवेत सततं न नियमान् केवलं बुधः ।

यमान् पतत्यकुर्वाणः नियमान् केवलान् भजन् ॥ (४-२०४)

यम हैं—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह; नियम हैं—शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर-प्रणिधान । वैदिक संस्कृति का आदर्श यह है कि नहा-धोकर साफ-शुद्ध होना, थोड़े में सन्तुष्ट रहना, तपस्वी जीवन व्यतीत करना, पढ़ना-पढ़ाना और ईश्वर का नाम लेना—ये पाँच नियम हैं, परन्तु इनका इतना महत्त्व नहीं है जितना प्रणिमात्र के प्रति स्नेह की दृष्टि से व्यवहार करना, सचाई पर दृढ़ रहना, दूसरे की वस्तु पर आँख न रखना, ब्रह्मचर्य का जीवन बिताना और अपना जो-कुछ है उसे भी छोड़ने के लिये तैयार रहना—इन पाँच यमों का पालन करना महत्त्वपूर्ण है । 'यम' आत्मा की साधना हैं, भीतर की साधना हैं; 'नियम' बाहर की साधना हैं । इस दिशा में वैदिक संस्कृति की तो यह घोषणा है कि ईश्वर का नाम लेना भी इतना महत्त्व का नहीं है जितना अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह पर डटे रहना । तभी मनु ने कहा—नियमों का पालन उतना महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना यमों का पालन करना महत्त्वपूर्ण है । जो केवल नियमों से बँधे रहते हैं और यमों की परवाह नहीं करते, वे आत्मा के विकास में आगे नहीं बढ़ सकते । सिर्फ नियमों तक बँधे रहने वाले ढोंगी हो सकते हैं, परन्तु यमों का पालन करने वाला ढोंगी नहीं हो सकता । आजकल चली छूआछूत और पूजा-पाठ पर मनु महाराज ने यह करारी चपेट लगाई है ।

(क) अहिंसा

१. जाति-देश-काल-समयानवच्छिन्नाः सार्वभौमा महाव्रतम् (योगदर्शन, २-३१)—पतंजलि मुनि ने योगदर्शन में अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह को यम कहा है, और इसके साथ इन्हें सार्वभौम महाव्रत कहा है। 'यम' और 'सार्वभौम महाव्रत' का क्या अर्थ है? यम का अर्थ है—नियमन करना, अनुशासन में बाँध देना। 'सार्वभौम' का अर्थ है—जो हर देश, काल तथा जाति पर एक-सा लागू हो। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह—इन पाँचों के अनुशासन में जब व्यक्ति या समाज अपने को बाँध लेता है, तब वह व्यक्ति या समाज भीतर के शत्रुओं को जीत लेता है। जब भीतर ही शत्रु न रहा, तो बाहर तो रह कैसे सकता है, क्योंकि भीतर के शत्रुओं—लालच, लालसा, बेईमानी आदि के कारण ही तो हम बाहर के शत्रु कल्पित कर लेते या बना लेते हैं।

अहिंसा सार्वभौम धर्म है—इसका क्या अर्थ है? अहिंसा की विरोधी हिंसा है। पतंजलि का कहना है कि हिंसा संसार में चल रही है। अगर हमें यह निर्णय करना हो कि हिंसा तथा अहिंसा—इन दोनों में से धर्म क्या है, तो इन दोनों को सार्वभौम बनाकर देख लो। इन दोनों में से जो टिके वह धर्म है, जो न टिक सके वह अधर्म है।

अगर हिंसा को सार्वभौम बना दिया जाय, तो कौन जिन्दा रह सकता है? जब जिसे मौका मिले वह दूसरे पर हमला कर दे। हमारी मुसीबत यही है कि वर्तमान भौतिकवाद ने हिंसा, असत्य, स्तेय, अब्रह्मचर्य, परिग्रह को ही सार्वभौम बनाया हुआ है—इसीलिये आज सब जगह असन्तोष-ही-असन्तोष है—और सभी एक-दूसरे के खून के प्यासे हैं।

हमारा सारा संगठन हिंसा को रोकने के लिए है। हमारी पुलिस, फ़ौज, अस्त्र-शस्त्र, गोली-बारूद, तमंचा, बंदूक, तोप—यह सब-कुछ किसलिए हैं? इन सबका उद्देश्य हिंसा का मुकाबला करना ही तो है—यह अलग बात है कि हम हिंसा को रोकने के लिए हिंसा का आश्रय ले रहे हैं, परन्तु हमारा हिंसा करते हुए भी लक्ष्य अहिंसा ही है। हिंसा को सार्वभौम कर दिया जाय तो यह टिक नहीं सकती; अहिंसा को सार्वभौम कर दिया जाय, तो यह सिद्धान्त टिक जाता है।

२. प्रकृति में तो हिंसा का राज्य है—पतंजलि मुनि के सिद्धान्त के विपरीत विकासवादी डार्विन तथा अन्य पाश्चात्य विद्वानों का कथन है कि प्रकृति का नियम तो हिंसा ही है। उनका कहना है कि संसार की प्रगति जीवन के प्रति

संघर्ष (Struggle for existence) से ही हो रही है। निर्बल बलवान् का भोज्य है। पौधों, पशु-पक्षियों तथा समाज में यही नियम काम कर रहा है। दो पौधे पास-पास लगाये जायें—उनमें से बड़ा पौधा छोटे पौधे के रस को खींच लेता है। पशुओं में बलवान् पशु निर्बल को खा जाता है, बड़ी मछली छोटी को निगल जाती है। भारत में भी कई विद्वानों ने इसे मत्स्य-न्याय कहा है। वे कहते हैं 'मत्स्यन्यायाभिभूतं जगत्'। टैनीसन ने अपनी कविता में इसी सिद्धान्त का उल्लेख करते हुए लिखा है : Nature red in tooth and claw—प्रकृति कैसी है ? ऐसी जिसके दाँत तथा पंजे खून से लथपथ हो रहे हैं।

प्रकृति का यही सिद्धान्त—बलवान् निर्बल पर हावी होकर ही जी रहा है—मानव-समाज में भी चरितार्थ हो रहा है। जब प्रकृति कमजोर को नहीं जीने देती, तब मनुष्य भी कमजोर मनुष्य को क्यों जीने दे ? इसी विचार ने मानव-समाज में युद्ध के विचार को जन्म दिया है। कमजोर राष्ट्र को जीने का कोई अधिकार नहीं है।

इस विचार ने २० वीं शताब्दी में दो महायुद्धों को जन्म दिया। एक युद्ध १९१४ में हुआ, दूसरा १९३९ में हुआ। जर्मनी में ऐसे विचारक हुए जिनका कहना था कि युद्ध प्रकृति की अनिवार्य माँग है। इसे उन्होंने Biological necessity कहा। जीवन रह ही तब सकता है जब बलवान् निर्बल को खा जाये, जब बलवान् राष्ट्र निर्बल राष्ट्र को अपने आधीन कर ले। इसी विचार ने साम्राज्यवाद को जन्म दिया। इसी विचार के कारण अंग्रेजों का राज सारे संसार में फैल गया।

३. परन्तु क्या मानव-समाज पशु-पक्षियों, मछलियों के नियम से शासित होगा ?—भारत के विचारकों का तथा यहाँ की संस्कृति का कहना है कि यह ठीक है कि प्रकृति में, पशु-पक्षियों, मछलियों में मत्स्य-न्याय काम कर रहा है, वहाँ बड़ा छोटे को खा जाता है, प्रकृति के दाँत तथा नाखून खून से लथपथ हैं, परन्तु मानव-समाज का यह नियम नहीं है। जब मनुष्य इस नियम को लक्ष्य में रखकर चलता है तब वह पशु रह जाता है।

४. मानवीय सिद्धान्त तथा पशुओं के सिद्धान्त में भेद है—अगर पशुओं का सिद्धान्त तथा मानव का सिद्धान्त एक ही होता, तो मानव सदा पशु रह जाता। मनुष्य ने ही इस सिद्धान्त को काट दिया है। मानव-जगत् में उसी की पूजा हुई है जिसने अपने लिए दूसरों का खून बहाने के स्थान पर दूसरों के लिये अपना खून बहाया है। उदाहरणार्थ—

(क) ईसाइयत—ईसाई धर्म का क्या इतिहास है ? ईसा को सूली पर चढ़ाया गया, परन्तु सारा युरोप ईसाई हो गया; इंग्लैंड में लैटीमर नामक पादरी को आग की लपटों की भेंट कर दिया गया, परन्तु ईसाई-जगत् में उसका

नाम घर-घर फैल गया, मर कर यह अमर हो गया।

(ख) बुद्ध—आज से अढ़ाई हजार साल पहले भारत के मगध के राज्य में अजात-शत्रु नामक राजा राज करता था। उस समय यज्ञों में पशु को बलि चढ़ाया जाता था। राजा के यज्ञ में बलि चढ़ाने के लिए बकरियों का एक समूह हाँका जा रहा था। उन्हें हाँकने वाले से एक साधु ने पूछा—ये बकरियाँ कहाँ ले जायी जा रही हैं? ग्वाले ने उत्तर दिया—राजा के यज्ञ में बलि चढ़ाने के लिये। वह साधु इत बकरियों के आगे-आगे हो लिया। जब यज्ञ-स्थल पर पहुँचे, तब उस साधु ने राजा के आगे एक तिनका तोड़कर रख दिया और कहा—राजन् ! क्या तुम अपने संपूर्ण राज्य की शक्ति लगाकर इस तिनके को जोड़ सकते हो? अजातशत्रु ने कहा—नहीं। भिक्षु ने कहा—जब तुम एक तिनके को भी तोड़कर जोड़ नहीं सकते, तो जीवन तो बड़ी चीज है। जिस जीवन को तुम दे नहीं सकते, उसे नष्ट करने का तुम्हें क्या अधिकार है? राजा ने निरुत्तर होकर सिर झुका दिया। बकरियों को छोड़ दिया गया। वह भिक्षु और कोई नहीं, स्वयं बुद्ध था जो मनुष्यों क्या, पशुओं के लिये भी अपना जीवन देने को तैयार था। बुद्ध की संसार ने पूजा की और वह भारत में ही नहीं, देश-विदेश में भी पूजा जाने लगा।

(ग) हक्सले तथा डार्विन—डार्विन विकासवादी था। उसका कहना था कि संसार में असंख्य प्राणी जन्मते हैं, परन्तु उनमें से बलशाली ज़िन्दा रह जाते हैं, निर्बल नष्ट हो जाते हैं—यही संसार का नियम है। हक्सले भी विकासवादी था। उसका भी यह कहना था कि संसार में बलशाली ही अन्त तक ज़िन्दा रहता है। *Survival of the Fittest*—यह संसार का नियम है। परन्तु जैसे भारतीय चिन्तक पशु-जगत् में मत्स्य-न्याय की बात करते थे, परन्तु मानव-जगत् में अहिंसा की बात करते थे, वैसे हक्सले यद्यपि विकासवादी था और बलशाली के ही जीवित रहने की बात करता था, तो भी उसका कहना था कि भौतिक जगत् में तो हम देखते हैं कि प्रकृति करोड़ों प्राणियों को उत्पन्न कर देती है, जिनमें से कुछ-एक बलशालियों को ही जीवित रखती है। परन्तु आध्यात्मिक जगत् में यह नियम काम नहीं करता। आध्यात्मिक जगत् में हम हर मनुष्य को, वह कितना ही निर्बल क्यों न हो, जीवन के योग्य बनाने का प्रयत्न करते हैं : *Nature produces millions but preserves a type, but in the moral world the law is reversed. There we make everyone fit to survive rather than let the fittest to survive. We have to level up every soul.*

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
 'अहिंसा'। अहिंसा का अर्थ है—खुद जीओ और दूसरे को भी जीने दो (Live and let live)। वैदिक संस्कृति का यह लक्ष्य इसलिये था क्योंकि योगदर्शन के रचयिता पतंजलि मुनि के अनुसार मत्स्य-न्याय मछलियों का, कीड़े-मकोड़ों का, कुत्ते-बिल्लियों का सिद्धान्त है; मनुष्य का सिद्धान्त तो जीना और जीने देने का है—इतना ही नहीं, मनुष्य का सिद्धान्त न केवल दूसरे को जीने देने का है, अपितु दूसरे के जीवन के लिए अपने जीवन को कुर्बान कर देने का है। जो लोग दूसरों को अपने लिए कुर्बान करते हैं वे मानव-समाज में धिक्कारे जाते हैं; जो अपने को दूसरों के लिए कुर्बान करते हैं वे पूजे जाते हैं। जान लेने वाले के लिए नहीं, जान देने वाले के लिये दुनिया तरसती है—दयानन्द, श्रद्धानन्द, गांधी मरकर भी अमर रहेंगे, क्योंकि इन्होंने अपने को मानवता के लिये कुर्बान कर दिया था।

(ख) सत्य

१. वैदिक संस्कृति का दूसरा आधार-स्तम्भ 'सत्य' है—जैसे 'अहिंसा' वैदिक संस्कृति का पहला आधार-स्तम्भ है, वैसे 'सत्य' इसका दूसरा आधार-स्तम्भ है। सृष्टि के मूलभूत सिद्धान्तों की खोज करने वाले भारत के ऋषियों की यह खोज थी कि सत्य को कितना ही छिपाया जाए, वह भूठ के पहाड़ के नीचे दबा हुआ भी उसे नीचे से खोदकर ऊपर उभर आता है। सत्य का स्वभाव प्रकट होना है। सत्य प्रकाश के समान है। कितना ही घनघोर अंधेरा हो, प्रकाश की एक किरण अन्धकार को चीर देती है; कितना ही घना अन्धकार हो, प्रकाश के सामने टिक नहीं सकता। जैसे पतंजलि ने 'अहिंसा' को सार्वभौम महाव्रत कहा, वैसे पतंजलि की खोज यह भी थी कि 'अहिंसा' की तरह 'सत्य' दूसरा सार्वभौम महाव्रत है।

२. भौतिकवादी जीवन असत्य का जीवन है; आध्यात्मवादी जीवन सत्य का जीवन है—भौतिकवाद के इस युग में हमारा जीवन असत्य पर, भूठ पर खड़ा है। हम जो मन में सोच रहे होते हैं, वह जवान पर आने नहीं देते—जवान से उलटी बात कहा करते हैं; जो जवान से कहते हैं, उसे करने का हमारा इरादा नहीं होता। सोचते कुछ हैं, कहते कुछ हैं, करते कुछ हैं।

'यन्मनसा मनुते तद्वाचा वदति, यद् वाचा वदति तत्कर्म्मणा करोति'—जो मन में हो वह वाणी से निकलना चाहिये, जो वाणी से कह दें वह कर्म में आना चाहिये। आज का जीवन इससे उलटा चल रहा है। यह उलटापन सामाजिक तथा वैयक्तिक—दोनों प्रकार के जीवन में चल रहा है।

इग्नेज़िओ सिलोने (Ignazio Silone) इटली की कम्युनिस्ट पार्टी का संस्थापक था। वह यूरोप के कम्युनिस्टों में मुख्य स्थान रखता था। उसका

Failed' में लिखता है कि एक बार वह स्टालिन से मिला। स्टालिन ने उसे सलाह दी कि जो काम करो, उससे ठीक उलटी बात कहा करो। जब सिलोन ने कहा कि यह तो भूठ होगा, तो स्टालिन ने इतना जोर का अट्टहास किया कि सारे कमरे की दीवारें गूँज उठीं। यह है हमारे आज के जीवन की फ़िलासाफ़ी।

३. सामाजिक जीवन—पोलिटीशियन कौन है—जो मन में हो उससे उलटी बात कहे, जो कह दे वह कभी न करे—आजकल समझा जाता है कि पोलिटिक्स और डिप्लोमेसी—राजनीति—वही है जो सच्ची बात को ज़ाहिर ही न होने दे—कहो कुछ, करो कुछ। आज का राष्ट्रीय जीवन इसी भूठ और मक्कारी की बुनियाद पर चल रहा है।

महात्मा गांधी के समय की बात है। इंग्लैंड में भारत की समस्या पर राउण्ड टेबल कान्फ़ेंस हुई। वहाँ यह चर्चा चली कि निम्न जातियों को, जिन्हें भारत में अस्पृश्य या अछूत कहा जाता है, एक वर्ग के रूप में वोट का विशेष अधिकार दे दिया जाय। इसका परिणाम यह होता कि यह वर्ग, जो अपने को हिन्दू कहता था, हिन्दुओं से अलग हो जाता—एक अलग वर्ग के रूप में बन जाता। हिन्दुओं में आपस में फूट का बीज बोने की यह एक ज़बरदस्त ब्रिटिश चाल थी। महात्मा गांधी वहाँ से यह कहकर चले आये कि अगर ऐसा किया गया तो इसके विरुद्ध मैं अपने जीवन की वाजी लगा दूँगा। रैमजे मैकडानल्ड उस समय इंग्लैंड के प्रधान-मंत्री थे। कुछ दिनों बाद उन्होंने एक अवार्ड (निर्णय) दे दिया कि अछूतों को एक वर्ग के तौर पर मताधिकार दिया जायगा। यह सुनते ही महात्मा गांधी ने अपने प्रण—मैं इसके विरुद्ध अपने जीवन की वाजी लगा दूँगा—के पालन के लिए, आमरण अनशन प्रारम्भ कर दिया।

यूरोप के राजनीतिज्ञ अचम्भे में थे—यह कैसा व्यक्ति है जो जो-कुछ कह गया था, उसे सचमुच क्रिया में करने पर उतर पड़ा है। उनकी राजनीति का अर्थ था—कहने के लिए भले ही कुछ कह जाओ, वह कहना करने के लिए नहीं होता। मैकडानल्ड की राजनीति और थी, महात्मा गांधी की राजनीति वैदिक संस्कृति के प्राण पतंजलि के सिद्धान्त पर टिकी थी—'यन्मनसा ऋनुते तद्वाचा वदति, य यद्वाचा वदति तत् कर्मणा करोति'—जो वाणी से कहा जाय, वह सिर्फ़ जवान हिलाने के लिए नहीं होता, करने के लिए होता है। परिणाम यह हुआ कि सारा ब्रिटिश साम्राज्य हिल गया और ब्रिटिश सरकार को अपना अवार्ड वापस लेना पड़ा, नहीं तो आज हिन्दू-समाज का एक बड़ा हिस्सा हिन्दुओं से अलग हो गया होता।

४. वैयक्तिक जीवन (प्राइवेट लाइफ़) तथा सामाजिक-जीवन (पब्लिक लाइफ़)—सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन के अतिरिक्त वैयक्तिक जीवन भी भूठ

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
 मक्कारी, दंगा-फरेब पर चल रहा है। जो लोग प्लेटफार्म पर दुनिया-भर की हाँकते फिरते हैं उनका वैयक्तिक जीवन देखा जाय, तो लज्जा के मारे सिर झुक जाता है। मसूरी में एक महात्मा धर्म का उपदेश दिया करते थे। सुनने वालों की बड़ी भीड़ रहती थी। स्त्रियों में भक्ति कुछ अधिक होती ही है। एक दिन पता लगा कि एक लड़की को भगा लेकर उड़ गये। उनका सारा धर्म दूसरों के लिए था, प्लेटफार्म के लिए था। अबसर कहा जाता है कि आपको किसी की प्राइवेट लाइफ पर अंगुली उठाने की क्या जरूरत है? प्राइवेट लाइफ में वह कुछ भी करता रहे, उसे छूट्टी होनी चाहिये। ऐसी बात नहीं है। जिसका प्राइवेट लाइफ भूठ पर चल रहा है, वह पब्लिक लाइफ में सच्चा या ईमानदार हो ही नहीं सकता। असली बात प्राइवेट लाइफ है। क्योंकि लोगों का निजी जीवन बिगड़ा होता है, वे जब इलैक्शन के बाद किसी जिम्मेवार पद पर आ जाते हैं—कोई मिनिस्टर, कोई किसी कमेटी का चेयरमैन—तो वे राष्ट्र के जीवन को ही गन्दा कर देते हैं। पब्लिक में शराबबन्दी पर लेक्चर भाड़ें और घर में शराब पीयें, प्लेटफार्म पर सदाचार की दुहाई दें और निजी जीवन में दुराचार करें—पब्लिक लाइफ और प्राइवेट लाइफ के अलग-अलग होने का यही दुष्परिणाम होता है।

हम लोग लखनऊ कांग्रेस में गये थे जिसमें तिलक ने कहा था—We have Lucknow in Lucknow—उसमें एक हरिजन सहभोज होना था। एक राष्ट्रीय नेता के पास हम लोग यह कहने के लिए गये कि आप इसमें सम्मिलित हों। वे कहने लगे—मैं तो नहीं आऊँगा, पर आप छाप दें कि मैं सम्मिलित हुआ हूँ।

५. असत्य के कारण आज का जीवन कृत्रिम हो गया है—जो जैसा हो वह वैसा प्रकट में न हो, यह कृत्रिमता है। आज के मानव-समाज के जीवन में यह कृत्रिमता घर कर गई है। अपनी असलियत को कोई जाहिर नहीं होने देना चाहता। दूसरों का खून चूसने वाला यह चाहता है कि दुनिया उसे दयालु कहे, पद-पद पर भूठ बोलने वाला यह चाहता है कि लोग उसे सच्चा और ईमानदार कहें, चोर और व्यभिचारी अपने को सत्पुरुष और सदाचारी कहलाने का दंभ रचता है—यह सब कृत्रिम जीवन इसीलिये चल रहा है क्योंकि हम सत्य का नाम लेते हैं, परन्तु असत्य का आचरण करते हैं। अगर कोई हमें पलट कर देखे, अन्दर का बाहर रख दे, तो हमारे भीतर से इतना गन्द निकले कि हम अपनेपन को देखकर ही लजा जायें। हमारे वैयक्तिक जीवन का यह हाल है।

सामाजिक जीवन में भी यही कृत्रिमता है। लोग मिनिस्ट्रों के पीछे भागते हैं। समझते हैं कि ये कुछ दे जायेंगे। वे भी बड़े-बड़े वायदे कर जाते हैं जिन्हें पूरा करने का उनका कभी इरादा नहीं होता। देशों के चुनाव होते हैं। पार्टियाँ चुनाव लड़ती हैं। बड़े-बड़े मनीफेस्टो निकलते हैं—पार्टी हर तरह के वायदे करती है। इन वायदों को सुनकर यकीन हो जाता है कि अब धरती पर स्वर्ग उतरने वाला

है। परन्तु चुनाव ही जर्मि के बाद जब कोई पार्टी सत्ता में आती है तब इतना ही नहीं कि वे सब वायदे भूल जाती है, बल्कि देश पहले जिस नरक में पड़ा था, उससे बदतर नरक सामने आ जाता है।

६. परन्तु असत्य कभी टिक नहीं सकता—वैदिक संस्कृति का कहना यह है कि असत्य कभी टिक नहीं सकता। लोग कहते हैं कि दुनिया में असत्य ही चलता है, सत्यवादी सदा कष्ट पाते हैं। परन्तु नहीं, पतंजलि की खोज यह है कि अन्त तक टिकने वाला सिद्धान्त असत्य नहीं, सत्य ही है। क्यों सत्य ही टिकाऊ सिद्धान्त है? क्यों असत्य कुछ देर ही टिकता है और अन्त में क्यों ढह जाता है?

(क) खोटा सिक्का खरा कहने पर चलता है—संसार में क्या खोटा सिक्का नहीं चलता है? चलता है, परन्तु कबतक चलता है? खोटा सिक्का तभी तक चलता है जब तक लोग उसे खरा समझते रहते हैं। अगर कोई खोटा सिक्का लेकर बाज़ार में चला जाये, तो कौन उसे लेगा? सचाई की खूबी यह है कि भूठ भी तभी तक चल सकता है जबतक वह सच का बाना पहनकर निकले। असत्य तभी तक ज़िन्दा रहता है जबतक लोग उसे सत्य समझें। जहाँ पता चला कि यह भूठ है, उसी क्षण वह गिर जाता है।

(ख) सारा समाज सत्य की खोज में है—इसमें सन्देह नहीं कि संसार में असत्य का बोलवाला है, परन्तु सारा समाज असत्य में से सत्य की खोज में लगा हुआ है। हमारे स्कूल-कॉलेज किस उद्देश्य को लेकर चले हैं? उनमें काम कर रहे अध्यापक क्या कर रहे हैं? शिक्षा की यह सारी मशीनरी सिर्फ एक काम में जुटी है—बच्चों को उस बात की शिक्षा दें जो सत्य है, जो असलीयत है, जो टिकाऊ है। अदालतें, जज दिन-रात किस काम में लगे हैं? कचहरियों में बैठे जज भूठ में से सचाई को निकालने में लगे रहते हैं। यह बात ठीक है कि वकीलों का पेशा ऐसा है जो सच को भूठ साबित करने में लगा रहता है, परन्तु उनका मुद्दा भी यही होता है कि उनका भूठ तभी तक टिक सकेगा, जबतक वे साबित कर दें कि उनकी बात भूठ नहीं, सच है। जहाँ जज ने उनका भूठ पकड़ा, वहीं वे चित हो जाते हैं। असत्य टिकता नहीं, सत्य ही टिकाऊ है।

७. जाबाल सत्यकाम की कथा (छान्दोग्य, ४-४)—छान्दोग्य उपनिषद् में जाबाल सत्यकाम की कथा आती है। कहते हैं कि जाबाल एक स्त्री थी जिसका पुत्र सत्यकाम था। वह ब्रह्म-ज्ञान प्राप्त करना चाहता था। वह एक मुनि के पास गया और प्रार्थना की कि मैं आपके पास रह कर ब्रह्म-ज्ञान प्राप्त करना चाहता हूँ। मुनि ने बालक से उसके पिता का नाम पूछा। उसे पिता का सहवास नहीं प्राप्त हुआ था, इसलिये उसने अपनी माता से पिता के विषय में जानकारी माँगी। माता ने कहा : 'बहु अहं चरन्ती परिचारिणी योवने त्वामालभे'—मैं अनेक

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
 व्यक्तियों को सेवा करती थी—इसी प्रकार कभी तुम्हारा जन्म हुआ। पता नहीं, तुम्हारा पिता कौन था। सत्यकाम ने यही बात मुनि को साफ़-साफ़ कह दी। गुरु ने कहा—इस प्रकार सत्य बोलने वाला तू है—तेरा नाम सत्यकाम ठीक ही है। इस प्रकार सत्य बोलने वाले को मुनि ने ब्राह्मण की संज्ञा दी।

८. वैदिक संस्कृति का दूसरा आधार स्तम्भ 'सत्य' है—समाज के मूलभूत मौलिक तत्त्वों की खोज करने वाले पतंजलि मुनि का कहना है कि जैसे 'अहिंसा' एक सार्वभौम महाव्रत है, वैसे ही 'सत्य' भी सृष्टि का सार्वभौम सिद्धान्त है। सिद्धान्त की परीक्षा इसी से होती है कि अगर उसे हर देश, काल, समाज पर लागू कर दिया जाय, तो वह टिक सके। अगर असत्य को, भूठ को सार्वभौम कर दिया जाय, हर व्यक्ति भूठ बोलने लगे, तो यह टिक नहीं सकता। सत्य ही टिक सकता है। जहाँ असत्य टिकता हुआ दिखलाई देता है, वहाँ असत्य सत्य का जामा पहने होता है। यह बात भी देर तक नहीं चलती, जब तक चलती है, वह भी इसीलिए चलती है क्योंकि उस काल तक के लिए हम असत्य को सत्य समझ रहे होते हैं। इसलिए जो-कुछ असत्य का चलना दीखता है वह सत्य का ही चलना होता है। जिस क्षण उसमें से असत्य उभरा, उसी क्षण वह नष्ट हो जाता है, ठीक ऐसे जैसे प्रकाश की एक किरण के आते ही सदियों का घना अन्धकार एक क्षण में नष्ट हो जाता है। तभी वैदिक-संस्कृति का कहना है—'अनृतात् सत्यं गमय'—भूठ से निकाल कर मुझे सत्य के मार्ग पर डाल। असल में, सत्य सदा उभरा करता है, यह उसकी प्रकृति है; असत्य छिपा करता है इसलिये उसके पकड़ने के प्रयत्न किए जाते हैं, उसे ढूँढा जाता है ताकि उस पर प्रहार किया जा सके।

(ग) अस्तेय

१. आज हमारी संस्कृति का आधार स्तेय बना हुआ है—'स्तेय' का अर्थ है—चोरी; 'अस्तेय' का अर्थ है—चोरी न करना। यद्यपि चोरी को सब बुरा कहते हैं, फिर भी चोरी से देखा जाय, तो हम सब चोर हैं। चोरी क्या है? जो वस्तु दूसरे की है उसे छल-कपट से, दूसरे के बिना जाने, उड़ा लेने का नाम चोरी है, जबर्दस्ती छीन लेने का नाम डाका है। उदाहरणार्थ—

(क) नैपोलियन तथा डाकू—एक डाकू को नैपोलियन के सामने पकड़ कर लाया गया। उस पर अभियोग यह था कि उसने डाका डाला था, किसी का माल जबर्दस्ती छीन लिया था। नैपोलियन ने जब उसे दण्ड देने की बात कही, तो उसने कहना शुरू किया—मुझे दण्ड देने से पहले मेरी एक बात सुन लो। क्या बात? डाकू ने कहा, पहले मुझे यह बताओ कि मुझ और तुम में क्या अन्तर है? मैं छोटे पैमाने पर डाका डालता हूँ, तुम बड़े पैमाने पर डाका डालते

हो। क्योंकि मैं छोटे पैमाने पर वही काम करता हूँ जो तुम बड़े पैमाने पर करते हो, इसलिए मैं डाकू कहलाता हूँ, तुम बड़े पैमाने पर उसी काम के लिये सम्राट् कहलाते हो। काम तो तुम्हारा भी वही है जो मेरा है।

डाकू का कहना बिल्कुल ठीक था। हम सभी चोर हैं, डाकू हैं। इसी बात को देखकर टैनीसन ने कहा था—We are cheats, We are cheated—हम सभी चोर हैं, ठग हैं, दूसरे हमें ठगते हैं, हम दूसरों को ठगते हैं।

(ख) डॉक्टर, वकील, पुलिस—आज के युग ने ऐसा पलटा खाया है कि अपने-अपने दायरे में हम सब चोर हैं, ठग हैं, जेबकतरे हैं। डॉक्टर का उद्देश्य मरीज को ठीक करना इतना नहीं, जितना उसकी जेब को साफ़ करना है; वकील का उद्देश्य सचार्ड को सामने ला रखना इतना नहीं, जितना मुवकिल की जेब कतरना है; पुलिस के फन्दे में एक बार फँसा ईमानदार भी उसमें से निकल नहीं सकता। डॉक्टर बढ़ रहे हैं, उनके साथ बीमारियाँ बढ़ रही हैं; वकील बढ़ रहे हैं, तो उनकी बढ़ती के साथ मुकदमेवाजी बढ़ रही हैं; पुलिस बढ़ रही है, तो उसके बढ़ने के साथ-साथ अपराध बढ़ रहे हैं। डॉक्टर को अपनी फ़ीस से मतलब, फिर मरीज भले ही जहन्नुम में जाए; वकील को अपना जाल फैला कर मुवकिल की जेब साफ़ करने से मतलब। यह चोरी, ठगी या डाका नहीं तो क्या है? यह सभ्य समाज की कानूनी मोहर लगा हुआ डाका है।

(ग) कारटून, जिसमें एक हाथ अपनी तथा दूसरा हाथ दूसरे की जेब में दिखाया गया है—समाज की इस अवस्था को दिखाने के लिए एक कार्टूनिस्ट ने ऐसा कारटून बनाया जिसमें डॉक्टर, वकील तथा पुलिस वाले का एक हाथ अपनी जेब में था, दूसरा हाथ दूसरे की जेब में था। एक जज साहब आप-बीती सुना रहे थे। वे कभी चीफ़ जज थे, और मोटर से एक शहर से दूसरे शहर जा रहे थे। रास्ते में एक ट्रक वाले ने मोटर पर टक्कर मार दी और घटना-स्थल पर पुलिस आ पहुँची। पुलिस को क्या मालूम था कि मोटर में जज साहब हैं। वे कहने लगे कि मामला रफ़ा-दफ़ा करना है तो पैसा देना पड़ेगा, नहीं तो चलो थाने। जज साहब ने थाने चलना स्वीकार किया। वहाँ रिपोर्ट लिखी जाने लगी। क्या नाम है, बाप का नाम क्या है। फिर पूछा, पेशा क्या है? साहब बोले—चीफ़ जज। चीफ़ जज सुनते ही पुलिस वालों की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई, होश फ़ाख़्ता हो गए। आँगे जो-कुछ हुआ, वह लम्बी कहानी है, परन्तु पुलिस कैसी वेशर्मी से पैसे माँगती है, इसका यह अच्छा नमूना है। एक डॉक्टर थे, जिसने ऑपरेशन के लिए मरीज से फ़ीस तय करके अगाऊ रुपया ले लिया था। मरीज को जब ऑपरेशन-टेबल

पर लिटाया, पेट चीर दिया, तब डॉक्टर कहने लगे—हज़ार रुपया और देना पड़ेगा। ऐसे वकील भी हैं। भले ही बहुत थोड़े हैं, जो फ़ीस लेकर या तो वक्त पर अदालत में नहीं पहुँचते, या विरोधी पक्ष से पैसा लेकर उससे मिल जाते हैं। ये लोग कौन हैं? कारटून खींचने वाले ने इन्हीं का एक हाथ अपनी जेब में, दूसरा हाथ दूसरे की जेब में पड़ा दिखलाया था। ये सम्य चोर, सम्य ठग तथा सम्य डाकू हैं।

- (घ) समाज में हर क्षेत्र में डाकेजनी का बोलवाला है—हमारे समाज की प्रवृत्ति यह है कि दूसरे की मजदूरी मुफ्त में या सस्ते में मिले। यह चोरी या डाकेजनी नहीं तो क्या है? दुकानदार खरा पैसा लेकर खोटा माल देना चाहता है; पुलिसमैन रिश्वत लेकर इंसान बेचना चाहता है; धर्म-गुरु चेलों से दान-दक्षिणा लेकर उन्हें निरा उल्लू बनाना चाहता है।

२. वैदिक संस्कृति का आधार-स्तम्भ स्तेय नहीं, अस्तेय है—वैदिक संस्कृति के प्रेरणा-स्रोत पतंजलि मुनि का कथन है कि संसार कुछ सार्वभौम सिद्धान्तों पर टिका हुआ है, उन्हीं पर टिक सकता है, अन्यथा जीवन की इमारत ढावाँडोल हो जाती है। जैसे अहिंसा तथा सत्य इस नींव को टिकाये हुए हैं, वैसे ही 'अस्तेय' एक तीसरा स्तम्भ है, जो मानव-जीवन के भवन को गिरने से बचा रहा है। उदाहरणार्थ—

- (फ) तभी चोर भी कहता है कि मैं चोर नहीं हूँ—मजे की बात यह है कि भौतिक सम्यता में चोर तो सभी हैं, अपने-अपने क्षेत्र में चोरी करने से बाज़ नहीं आते, परन्तु कोई अपने को चोर कहलाने के लिए तैयार नहीं। सब कहते हैं कि हम किसी को लूट नहीं रहे। संसार के हर क्षेत्र में छीना-भपटी चल रही है, लड़ाई-दंगा, दूसरे की सम्पत्ति को लूटना सब जगह है, परन्तु कोई यह कहने को तैयार नहीं कि इस लूट में उसने पहल की है। जिसने पहल की होती है, वह भी दूसरे का ही नाम लगाता है। ऐसा क्यों है?

ऐसा इसलिए है क्योंकि हर व्यक्ति की अन्तरात्मा उसे झुकभोर कर कह रही है कि विश्व का आधारभूत सिद्धान्त स्तेय नहीं, अस्तेय है। विश्व का आधार दूसरे का माल हड़पना नहीं, बल्कि, जैसे हर व्यक्ति अपनी सम्पत्ति की रक्षा चाहता है वैसे ही उसका कर्तव्य है कि दूसरे की सम्पत्ति पर आँख न उठाये। सब यही चाहते हैं, अच्छे क्या बुरे क्या, परन्तु करते सब उलटा हैं।

- (ख) अगर मनुष्य दूसरे की सम्पत्ति पर आँख रखेगा तो दूसरा कोई उसकी सम्पत्ति पर आँख लगाये बैठेगा—वैदिक संस्कृति की अमूल्य खोज, जिसके आधार पर संसार टिका रह सकता है, यह है कि स्तेय, चोरी या डाका सार्वभौम धर्म नहीं बनाये जा सकते। अस्तेय को ही सार्वभौम धर्म कहा

जा सकता है। स्व-कोई अस्तेय की ओरने प्रितये, तो समर्पण रह सकता है, सब-कोई स्तेय या चोरी, छीना-भूषटी का रास्ता पकड़ें, तो दुनिया चल नहीं सकती। एक मास्टर जी की आदत यह थी कि वे जिस मित्र के यहाँ जाते थे, उसकी टेबल पर जो नयी पुस्तक देखते थे, उसे दो-चार दिन पढ़कर लौटाने का वायदा करके ले जाते थे, लेकिन एक बार ले जाने के बाद फिर लौटाने का नाम नहीं लेते थे। उनकी सारी लाइवरी इसी प्रकार दो-चार दिन के लिए माँगी हुई पुस्तकों से बनी थी। उनकी हर किताब के लिए कहा जा सकता था कि यह अमुक से माँगी थी, वह अमुक से माँगी थी। उनकी अपनी खरीदी हुई किताब एक भी नहीं थी। ऐसे महापुरुषों के लिये किसी ने ठीक ही कहा है: किसी मित्र के माँगने पर किताब उधार देने वाला मूर्ख है, उधार माँगी हुई किताब को लौटाने वाला उस से भी ज्यादा—महामूर्ख है—One who lends a book is a fool, one who returns a book is a greater fool.

(ग) अस्तेय तथा अश्वपति के राज्य का वर्णन (छान्दोग्य, ५-११-१)—उपनिषद् में अश्वपति राजा का वर्णन आता है। वह अपने राज्य में आये अभ्यागतों के प्रति अपने शासन का वर्णन करते हुए कहता है—‘न मे स्तेनो जनपदे’—मेरे राज्य में कोई चोर नहीं है। आज तो सभी चोर बने हुए हैं इसलिये कहना हो तो यही कहेंगे कि हमारे राज्य में कोई भलामानुस नहीं है, कोई ऐसा नहीं है जिसे मौका मिले तो चोरी न करे।

(घ) चन्द्रगुप्त के राज्य में मँगस्थनीज का अनुभव—चन्द्रगुप्त के दरबार में ग्रीस का राजदूत मँगस्थनीज आकर रहा। उसने लिखा है कि भारत में रात को कोई अपने मकान में ताला नहीं लगाता था। रात को सिर्फ चाँद की किरणें मकान में प्रवेश करती थीं, चोर का कहीं नामोनिशान नहीं था।

(ङ) भारत की संस्कृति इस शिखर पर इसलिए पहुँची थी क्योंकि यहाँ का देवता पैसा नहीं था—भौतिकवादी युग का देवता पैसा है। हम जो-कुछ करते हैं, पैसा जोड़ने के लिए करते हैं। पैसा इस युग का रोग हो गया है। पं० गुरुदत्त विद्यार्थी ने एक लेख लिखा था, जिसका शीर्षक था ‘Pecunio-mania’। ग्रीक भाषा में Pecus का अर्थ है—पैसा। पैसे का मेनिया—अर्थात् पैसे का पागलपन। आज की दुनिया को पैसे का रोग हो गया है, पैसे का पागलपन। जिसके पास पैसा है, वही इस युग का देवता है। यही कारण है कि डॉक्टर, वकील, अध्यापक, दुकानदार—सभी पैसे के दीवाने हो रहे हैं।

जब सब पैसा कमाने में लगे हों तब इस होड़ में कोई आगे, कोई पीछे रह जाता है। जो आगे निकल जाते हैं, खूब पैसा जमा कर लेते हैं, उन्हें

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
 पूँजीपति (Capitalists) कहा जाता है। जो पीछे रह जाते हैं उन्हें निर्धन—मजदूर—कहा जाता है। पैसे की कमाई ही सब-कुछ है इसलिये समाज दो वर्गों में बँट गया है—धनी वर्ग, निर्धन वर्ग। इन दोनों में संघर्ष छिड़ जाना स्वाभाविक है, इसे 'वर्ग-संघर्ष' (class war) कहा जाता है। कारखानों के मालिक पूँजी लगाकर कारखाने, फैक्टरियाँ खोलते हैं, मजदूर हड़तालें करते हैं, उनमें आग लगाते हैं। 'स्तेय' पर आधारित सभ्यता का यह स्वाभाविक परिणाम है—इनमें कुछ छोटे और कुछ बड़े दर्जों के चोर हैं—रास्ता सभी का एक ही है।

- (च) दृष्टिकोण बदलना होगा—समाज की आज जो अवस्था हो रही है, जिस उलझन में समाज पड़ गया है, उसमें से उसे निकालने के लिए दृष्टिकोण बदलना होगा। वैदिक संस्कृति का दृष्टिकोण यह है कि पैसा एक साधन है साध्य नहीं, रास्ता है मंजिल नहीं। इसी को पतंजलि मुनि ने 'अस्तेय' का नाम दिया है। भारतीय संस्कृति का यह तीसरा आधार-स्तम्भ था।

(घ) ब्रह्मचर्य

ब्रह्मचर्य शब्द के तीन अर्थ

१. वैदिक संस्कृति का चौथा आधार स्तम्भ ब्रह्मचर्य है, ब्रह्म—अर्थात् महान् बनना—वैदिक संस्कृति के भवन को डावाँडोल होने से बचाने के लिए पतंजलि ने जिस चौथे आधार स्तम्भ को आवश्यक बतलाया है, वह है 'ब्रह्मचर्य'। ब्रह्मचर्य का विचार सिर्फ वैदिक संस्कृति की खोज है। ब्रह्मचर्य का क्या अर्थ है? यह शब्द 'ब्रह्म' तथा 'चर्य'—इन दो शब्दों से बना है। 'ब्रह्म' का अर्थ है—बड़ा, विशाल। 'ब्रह्म'—इस शब्द से भारत का हर व्यक्ति परिचित है। ईश्वर को ब्रह्म कहा जाता है। वेदान्ती अपने को ब्रह्म कहा करते हैं। 'चर्य' का अर्थ है—विचरण करना। 'ब्रह्मचर्य' का अर्थ है—ब्रह्म में विचरण करना—ईश्वर में विचरण करना या महत्ता में विचरण करना, अपने जीवन को छोटे से बड़ा बनाने का प्रयत्न करना।

हम अपने जीवन को भीतर से भाँकें, तो हर बात में हमें दीख जायेगा कि हम कितने छोटे हैं। कद-में छोटे होने की बात नहीं, मानवता में, इंसानियत में हम कितने बौने हैं! बात-बात में हम कहते हैं—यह आदमी बड़ा ओछा है, कमीना है। अपना उल्लू सीधा करने के लिए हर-एक आदमी कमीनेपन पर उतर आता है। जहाँ तक मानवता का, इंसानियत का सम्बन्ध है, ओछेपन, कमीनेपन पर न उतरना, अपने को उदार बनाना, छोटेपन से ऊपर उठना—यह ब्रह्मचर्य है। वैदिक संस्कृति जब कहती है कि ब्रह्मचर्य इस संस्कृति का आधार स्तम्भ है,

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
 तब इसका यही अभिप्राय होता है कि हर इन्सान को ऊपर उठने का सपना लेना चाहिए, ब्रह्म में, महत्ता में विचरने का प्रयत्न करना चाहिये ।

२. ब्रह्मचर्य का एक दूसरा भी अर्थ है : इन्द्रियों का संयम करना—जो व्यक्ति महान् होने के रास्ते पर चल पड़ा है, उसके लिए यह आवश्यक है कि इन्द्रियों को विषयों में से खींच कर उन पर संयम रखे, उनके पीछे न चले, उन्हें अपने पीछे चलाये । इन्द्रियाँ कहाँ जाती हैं ? इन्द्रियाँ जाती हैं विषयों में, विषयों में जो रस पड़ा है उसकी तलाश में । यहाँ वैदिक संस्कृति की दूसरी खोज है । वह खोज यह है कि विषयों में जो रस है, वह अल्प है । हम तो ब्रह्म—महान्—होना चाहते हैं, फिर अल्प में, छोटे में, क्षुद्र में क्यों उलझें ? उपनिषद् में कहा है—‘भूमा वै सुखम्, नाल्पे सुखं अस्ति’—भूमा में, महत्ता में सुख है, अल्प में सुख नहीं है; जो-कुछ है, वह क्षणिक है; कुछ देर रहता है, फिर चला जाता है । इसलिये ब्रह्मचर्य का दूसरा अर्थ यह है कि हम इन्द्रियों को, जो घोड़ों की तरह बाहर भागती हैं, संयम की लगाम से पकड़ें, उन्हें संयम में रखें, काबू में रखें, ताकि हमारा छोटापन, बौनापन सदा के लिये न बना रहे ।

३. ब्रह्मचर्य का एक तीसरा भी अर्थ है—कामवासना का संयम—जब हम ब्रह्मचर्य की बात करते हुए इन्द्रिय-संयम की बात करते हैं, तब ब्रह्मचर्य के अर्थ को समझने के लिए एक कदम और आगे बढ़ना होगा । वैसे तो इन्द्रियाँ पाँच हैं, प्रत्येक इन्द्रिय की वासना है, परन्तु उन सबमें काम-वासना सबसे मुख्य है । पतंजलि मुनि का कहना है कि समाज का भवन तभी तक टिका रह सकता है जब तक इसको सँभालने वाले वे व्यक्ति हों जो विषय-वासना के कीचड़ में न फँसे हों । जो खुद कीचड़ में धँसे हैं, वे समाज के भवन को भी कीचड़ में नहीं धँसायेंगे, तो क्या करेंगे, ? ब्रह्मचर्य का तीसरा अर्थ विषय-वासना से मुक्ति है ।

आज का वासनामय जीवन

४. आज का समाज विषय-वासना में डूबा हुआ है—ब्रह्मचर्य का प्रचलित अर्थ इन्द्रियों पर, और विशेषतौर पर विषय-वासना (Sex) पर काबू पाना है । आज के समाज ने सेक्स के घोड़े को खुला छोड़ रखा है । हर क्षेत्र में आज सेक्स-ही-सेक्स दिखलाई देता है ।

(क) अखबारों को उठा कर देखें तो जितने इश्तिहार हैं, सब में आधी नंगी लड़कियों के चित्र छप रहे हैं जिससे पढ़ने वालों का उधर ध्यान आकर्षित हो ।

(ख) कोई समय था जब भारत में स्त्रियाँ नंगी बाहों की कमीज नहीं पहनती थीं, आज स्त्रियों में ऐसे कपड़े पहनने का रिवाज हो गया है जिससे स्त्रियों के शरीर का बहुत बड़ा भाग नंगा दिखलाई देता है ।

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai.
 (ग) आज हमारा समाज सेक्स-प्रधान हो गया है। सिनेमा में, वेशभूषा में, जीवन में सेक्स-ही-सेक्स दिखाई देता है। भारत के सिनेमा-चित्रों में तो एक ही बात मुख्य होती है—लड़की के पीछे लड़का बावला होकर दौड़ रहा है। ये सब दृश्य सिनेमा में, टेलीविजन में दिखाये जाते हैं। इस सबका परिणाम यह है कि छोटे-छोटे बच्चे प्रेम के गीत गाते रहते हैं—हमारे नव-युवकों का समाज मानो एक पब्लिक, ओपन एयर सिनेमा हो गया है।

५. सेक्स के कारण नवयुवकों का जीवन नष्ट हो रहा है—हमारे समाज में सेक्स को इतनी छूट मिलती जा रही है कि नवयुवकों के लिए उसके भयंकर परिणाम हो रहे हैं। उदाहरणार्थ—

(क) डा० ब्लाच डेनमार्क के नवयुवकों के विषय में लिखते हैं :

In these last ten years, for every hundred youngmen living, there have been 119 infections during 10 years, that is to say, on an average everyone has been infected once, and a great many have been infected more than once.

अर्थात्—डेनमार्क के नवयुवकों में १० वर्ष में हर नवयुवक को सिफिलिस या गोनोरिया हो चुका है, और कई नवयुवकों को ये बीमारियाँ दो बार हो चुकी हैं।

(ख) हेबिलाक इलिस अपनी पुस्तक 'Sex in Relation to Society' के पृष्ठ ३२६ पर लिखते हैं कि आज युरोप में ऐसा समय आ गया है जब 'सिविलिजेशन' तथा 'सिफिलिजेशन' का एक ही अर्थ हो गया है। सेक्स को खुला छोड़ देने का परिणाम सिफिलिस को खुला छोड़ देना है।

(ग) अमरीका के 'हेराल्ड ट्रिब्यून' का कथन है : 'When over 1200 young people between the ages of 12 and 24 take their own lives in one year (in America); When with the present rate of statistics every marriage will end in divorce in 11 years; when 80 percent of crimes are committed by children under 18; when 42 percent of unmarried mothers are school girls under 16, is it not time to ring the changes on self-denial instead of self-expression'.

अर्थात्—सेक्स को खुली छूट देने का परिणाम यह है कि अमरीका में १२ से २४ वर्ष की आयु के व्यक्ति आत्मघात कर लेते हैं, प्रत्येक विवाह के ११ वर्ष के भीतर तलाक में बदल जाने की सम्भावना है, ८० प्रतिशत अपराध

१८ वर्ष से कम आयु के बालक करते हैं, स्कूल में पढ़ने वाली १०० में से ४० लड़कियाँ १६ वर्ष की आयु में, विवाह से पहले ही, माँ बन जाती हैं। ऐसी हालत में क्या यह आवश्यक नहीं जान पड़ता कि हम हर क्षेत्र में युवा वर्ग को खुली छूट देने के बजाय उन्हें संयम का पाठ पढ़ायें।

यह सब-कुछ डेनमार्क या अमरीका का ही हाल नहीं है, पाश्चात्य सभ्यता जहाँ-जहाँ पहुँची है, भौतिकवाद (Materialism) ने जहाँ भी डेरा डाला है, वह कोई भी देश हो, सबका यही हाल है। 'भाव-प्रकाश'-ग्रन्थ के अनुसार सिफ़िलिस को फिरंग रोग कहा गया है क्योंकि यह फिरंगियों से भारत में आया।

ब्रह्मचर्य का वैदिक दृष्टिकोण

६. वैदिक संस्कृति का दृष्टिकोण ब्रह्मचर्य का दृष्टिकोण था—सेक्स के विषय में भारतीय ऋषियों की दृष्टि बिल्कुल भिन्न थी। वे सेक्स में नहीं डूबे हुए थे।

(क) उपनिषद् में अश्वपति अपने राज्य का वर्णन करते हुए कहता है : 'न स्वैरी स्वैरिणी कुतः'—अर्थात्, मेरे राज्य में कोई व्यभिचारी नहीं है, जब व्यभिचारी नहीं है तो व्यभिचारिणी कहाँ हो सकती है ?

(ख) रामायण में वर्णन आता है कि जब राम सीता को ढूँढते-ढूँढते सुग्रीव के पास पहुँचे, तब सुग्रीव ने उन्हें कुछ ज़ेवर दिखलाये जो सीता ने रावण द्वारा सीता-हरण के समय भूमि पर नीचे फेंके थे। राम ने लक्ष्मण को वे ज़ेवर दिखलाकर पूछा कि क्या ये सीता के हैं ? लक्ष्मण ने क्या उत्तर दिया ? रामायण में वाल्मीकि लिखते हैं—लक्ष्मण ने कहा :

नाहं जानामि केयूरे नाहं जानामि कुण्डले ।

नूपुरे त्वभिजानामि नित्यं पादामिवन्दनात् ॥

मैं सीता माता के सिर, कान आदि के ज़ेवर नहीं पहचानता, पाँवों के ज़ेवर पहचानता हूँ क्योंकि मैं नित्य उनका चरण-वन्दन किया करता था। इस आदर्श को लेकर वैदिक संस्कृति का निर्माण हुआ था।

(ग) एक सज्जन, जो विलायत गये सुनाते हैं कि एक बार उन्हें किसी अंग्रेजी घराने में अन्य मित्रों के साथ निमंत्रित किया गया। सबने अपना-अपना गाना सुनाया। उन्होंने भी सुनाया। उन्हें एक श्लोक याद था : 'मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्'—दूसरों की स्त्रियों को माँ समझो, दूसरों के रुपये-पैसों को मिट्टी का ढेला समझो।

यह विचार वहाँ की स्त्रियों को अजीब लगा। वे उस सज्जन का मज़ाक उड़ाने लगीं—बोलने लगीं, क्या मैं तुम्हारी माँ हूँ ?

७. फ़ॉयड का विषय-वासना को दमन न करने का विचार—फ़ॉयड एक बड़े भारी मनोवैज्ञानिक हुए हैं। आज के मनोविज्ञान पर वे ही छाये हुए हैं। उनका कहना है कि सेक्स को दबाने से, उसका संयम करने से, मनुष्य के मन में विकार उत्पन्न हो जाते हैं। सेक्स दबाना नहीं, बल्कि सेक्स के विचारों को खूली छुट्टी मिलनी चाहिये ताकि मन की भाप भीतर बनती-बनती देगची को ही न फोड़ दे। इस बात में कुछ सचाई है। वैदिक संस्कृति भी नहीं कहती कि सेक्स को सदा मार ही देना चाहिये। वैदिक-संस्कृति में प्रत्येक युवक के लिए गृहस्थाश्रम का विधान किया गया है। परन्तु गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना और आजकल के नवयुवकों की तरह सेक्स का शिकार हो जाना, सेक्स को ही जीवन समझना, विषयों में डूबे रहना—इन दोनों में भेद है।

ययाति तथा नारद की कथा

८. भोगाः न भुक्ताः वयमेव भुक्ताः—यह वैदिक दृष्टिकोण है—ययाति तथा नारद की कथा—इसमें सन्देह नहीं कि संसार के भोग भोगने से तृप्ति होती है, मन शान्त हो जाता है। फ़ॉयड का यह कहना कुछ हद तक सही है, परन्तु बात यहीं समाप्त नहीं हो जाती। वैदिक संस्कृति की खोज यह है कि विषय-वासना शान्त होकर फिर जाग उठती है, यह विषय-वासना का स्वभाव है। इस बात को पौराणिक साहित्य में बड़े रोचक कथानकों द्वारा समझाया गया है।

(क) ययाति की कथा—ययाति नाम के एक राजा थे। विषय-भोगों में लिप्त रहते थे। जब मरने का समय आया तो रोने लगे—अब यह विषय-भोग कहाँ मिलेगा? उनके तीन सन्तानें थीं। सन्तानों ने देखा, पिता रो रहे हैं। पूछा—क्या बात है? बोले—यह दुनिया हाथ से छूट जायगी, अब विषयों का आनन्द नहीं मिलेगा। पिता की यातना को देखकर हर बेटे ने अपना जीवन पिता को भेंट कर दिया। परन्तु जीवन का समय तो बँधा-बँधाया होता है। जब भी एक बेटे का दिया दान-जीवन समाप्त होता, वे फिर रोने-घोने लगते। वे सब बेटों का जीवन खा गये, परन्तु अन्त तक उनकी लालसा वैसी-की-वैसी बनी रही। यह कहानी ययाति की ही नहीं है, हर इन्सान अपने में ययाति का नमूना है। वासना का भोग करने से वासना मिटती है, परन्तु कुछ देर बाद, फ़ॉयड कितना ही जोर लगा ले, यह फिर जाग उठती है।

(ख) नारद की कथा—इस सिलसिले में एक दूसरी भी कथा है। नारद जी कहीं जा रहे थे। उन्होंने एक पेड़ के नीचे एक भक्त को तपस्या करते देखा। बोले—देवलोक को जा रहा हूँ, कुछ पूछना है तो पूछ अपने विषय में?

भक्त बोला—भगवन्, जरा जाकर मेरे वही-खाते में देख आना कि मेरी मुक्ति में कितने जन्म शेष हैं। नारद ने कहा—अच्छा। वे आगे चले तो एक दूसरा भक्त तपस्या कर रहा था। उससे भी नारद जी ने वही बात कही, उसने भी वही उत्तर दिया।

नारद जी देवलोक जाकर इन दोनों के वही-खाते देख आये। पहला व्यक्ति वासनामय था, विषयों का दास था, उसके अभी सहस्रों जन्म शेष थे; दूसरा व्यक्ति वासनाहीन था, उसके मुक्त होने में सिर्फ एक जन्म शेष था। परन्तु नारद जी तो सबको उल्टी बात कहा करते थे।

जब लौटकर आये तब पहले दूसरे व्यक्ति से मिले जिसकी वासनाएँ बहुत-कुछ क्षीण हो चुकी थीं, सिर्फ एक जन्म शेष था। वह तो यह भी भूला हुआ था कि उसने नारद जी से अपने विषय में कोई बात कही थी। नारद जी बोले—स्मरण है कि तुमने कहा था कि देख आना, मेरे मुक्त होने में कितने जन्म शेष हैं। मैं देख आया हूँ। उसका तो यही एक जन्म शेष था, परन्तु नारद जी ने उससे कहा कि देखो, सामने का इमली का पेड़। इसके जितने पत्ते हैं तुम्हारे उतने जन्म अभी शेष हैं। वह प्रसन्न होकर नाचने लगा। नारद जी को बहुत आश्चर्य हुआ। पूछा—क्या बात है, तुम्हारे तो मुक्त होने में अभी इतने अधिक जन्म शेष हैं कि तुम्हारी मुक्ति बहुत दूर है। उसने कहा—मैं तो अभी अनन्त जन्म शेष समझ रहा था, वह अनन्तता तो समाप्त हुई, अब जितने भी जन्म शेष हैं वे परिगणित तो हैं, उनकी गिनती हो सकती है, मैं तो समझता था कि उनकी कोई गिनती ही नहीं। फिर मेरी तो मानसिक स्थिति शान्त है, वासनाहीन हूँ, इतने जन्म मुझे बिताने पड़ जायें तो कोई दुःख नहीं होगा।

अब नारद जी आगे चले। दूसरा भक्त दिखलाई दिया। उसने नारदजी से व्याकुल होकर पूछा—भगवन् ! स्मरण है, मैंने कहा था कि देवलोक में मेरे वही-खाते को देखकर आना। पता लगाना कि मेरी मुक्ति के कितने दिन शेष हैं। भगवन् ! क्या आपने देखा ? नारद जी बोले—हाँ, देखा, तुम्हारा यह अन्तिम जन्म है, इस जन्म के बाद तुम मुक्त हो जाने वाले हो। वह भक्त कहने लगा—हैं ! क्या यह अन्तिम जन्म है, इसके बाद मेरा कोई जन्म आने वाला नहीं है ? उसने भट अपना आसन समेटा और चलने लगा। नारद जी ने पूछा—कहाँ चल दिये ? वह कहने लगा—वाल-वच्चों को मिलने, दुनिया का पूरा रस लेने, क्योंकि इसके बाद संसार के रसों का आस्वादन करने का मौका नहीं मिलेगा।

कहाँ तो वह भक्त जिसे नारद जी ने कहा कि तुम्हारे अनेक जन्म बाकी हैं—वह यह जानता हुआ भी दुनिया के गोरखधन्धे से अलग रहा,

क्योंकि उसकी वासनाएँ क्षीण हो चुकी थी—कहा यह भक्त, जिस कहा गया कि मुक्ति तुम्हारे द्वार पर खड़ी है—वह वासनाओं में इतना सना था कि वासनाओं से मुक्त होना ही नहीं चाहता था। जितने क्षण जीवन के बचे थे, उनमें भी वह वासना का रस लेना चाहता था।

वैदिक संस्कृति की यह खोज है कि वासनाएँ भोगने से नहीं निवटतीं। जितना उन्हें भोगा जाय, उतना ही प्रचंड होती हैं। तभी कहा है—‘हविषा कृष्णवर्त्मैव भूय एवाभिवर्धते’—विषयों में व्यक्ति जितना डूबता है, उतना डूबता ही चला जाता है, चस्का पड़ जाता है। इसी को कहा है—‘भोगाः न भुक्ताः वयमेव भुक्ताः’—भोग हम नहीं भोगते, भोग हमें भोगने लगते हैं।

हम संसार को भोगने के लिए आये हैं, भोगे जाने के लिये नहीं; मालिक बनकर आये हैं, दास बन कर नहीं। इसी भावना को वैदिक संस्कृति में ‘ब्रह्मचर्य’ का नाम दिया गया है जो इस संस्कृति का चौथा आधार-स्तम्भ है।

(ङ) अपरिग्रह

१. वैदिक संस्कृति का पाँचवाँ आधार स्तम्भ ‘अपरिग्रह’ है—अपरिग्रह शब्द परिग्रह का उल्टा है। ‘परिग्रह’ शब्द दो शब्दों से बना है—‘परि’ तथा ‘ग्रह’। ‘परि’ का अर्थ है—चारों तरफ से; ‘ग्रह’ का अर्थ है—पकड़ लेना, घेर लेना, समेट लेना। हमारा जीवन परिग्रह का है। हम हर वस्तु को, चाहे हमारे काम की हो या न हो, पकड़े बैठे हैं, किसी चीज को छोड़ने के लिए तैयार नहीं।

‘संग्रह’ करना हमारा स्वभाव है। मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि संग्रह करना, जमा करना मनुष्य की नैसर्गिक प्रवृत्ति है। एक सेठ थे, बड़े साहूकार, बड़ी-बड़ी हवेलियाँ थीं उनकी, परन्तु चलते हुए रास्ते में एक बटन भी दीख जाता तो उठा कर जेब में डाल लेते थे।

२. परिग्रह और अपरिग्रह में भेद—वैसे तो हर मनुष्य की कोई-न-कोई आवश्यकता होती है, परन्तु ‘परिग्रह’ और ‘अपरिग्रह’ में यह भेद है कि ‘परिग्रह’ में जिस चीज की आवश्यकता न भी हो, उसे भी मनुष्य नहीं छोड़ता, उससे चिपटा रहता है, एक तरह से वह अपने को कबाड़ी बनाये रखता है। ‘अपरिग्रह’ में जिस चीज की मनुष्य को आवश्यकता हो, उसे भी वह छोड़ने का प्रयत्न करता है, उसके बिना काम चल जाय—यह चाहता है। किसी के पास ४ कपड़े हों, अगर ३ से काम चल जाय तो ४ की क्या जरूरत है? १ घड़ी से काम चल जाय तो २ की क्या जरूरत है? परिग्रही तथा अपरिग्रही में यह दृष्टि का भेद है। परिग्रही सामान को जोड़ता जाता है, अपरिग्रही दुनियावी सामान को छोड़ता

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
जाता है; परिग्रही पकड़ता जाता है, समेटता जाता है, अपरिग्रही उस सामान के बिना चल सके तो चलाता है।

३. संसार का नियम अपरिग्रह है, परिग्रह नहीं—यद्यपि हमारी प्रवृत्ति परिग्रह की है, जो-कुछ हमारे हाथ में है उसे हम छोड़ने के लिए तैयार नहीं होते, तो भी संसार का नियम अपरिग्रह है, छोड़ना है। पतंजलि का कहना है कि जिस पकड़ने के पीछे छोड़ना नहीं, ऐसा पकड़ना व्यक्ति तथा समाज को ले डूबता है। हम जहाँ खड़े हैं वहाँ खड़े रहें, तो आगे नहीं बढ़ सकते। जो कदम आगे रखा है उसे छोड़ कर ही अगला कदम रखा जा सकता है, अन्यथा हम खड़े-के-खड़े रह जायेंगे। विचारों का भी यही हाल है। परिस्थिति के अनुसार व्यक्ति तथा समाज के विचार बदल जाते हैं—पिछलों को वह छोड़ कर ही आगे बढ़ सकता है। जो मानव-समाज रूढ़ियों का दास हो जाता है, रूढ़ियों को छोड़ता नहीं, वह आगे कदम नहीं रख सकता। यह विचारों का अपरिग्रह है। परिस्थितियाँ बदल जायें, तो भी पुराने विचारों को पकड़ कर बैठे रहना परिग्रह है, उन्हें छोड़ देना अपरिग्रह है।

४. अपरिग्रह का यह अर्थ भी है कि आवश्यकताओं को घटाओ—भौतिक दृष्टि से विचार किया जाय, तो हम अपनी आवश्यकताएँ बढ़ाते जाते हैं। हमें एक की जरूरत हो तो दो, दो की जरूरत हो तो चार ले बैठते हैं। अपरिग्रह का अर्थ है—आवश्यकताओं को घटाना। आवश्यकताएँ बढ़ाने का कोई अन्त नहीं है। समझ का ही तो फेर है। जिसके पास एक मकान है वह दो की फ़िक्र में है, दो वाला चार की फ़िक्र में है। हाइड्रा नाम का एक साँप होता है जिसका एक सिर काट दें, तो उसकी जगह अनेक सिर पैदा हो जाते हैं। आवश्यकताओं का रूप भी हाइड्रा-सरीखा है—इनका कोई अन्त नहीं। इसलिये पतंजलि का कहना है कि आवश्यकताएँ बढ़ाने के स्थान में उन्हें घटाओ।

५. अस्तेय और अपरिग्रह में भेद—‘अस्तेय’ में भी आवश्यकताएँ कम की जाती हैं, ‘अपरिग्रह’ में भी, परन्तु इन दोनों में भेद है। अस्तेय और अपरिग्रह के भेद को समझने के लिए स्तेय और परिग्रह के भेद को समझ लेना आवश्यक है। ‘स्तेय’ का अर्थ है—दूसरे की वस्तु को जैसे-तैसे हथियाना, ‘परिग्रह’ का अर्थ है—अपनी वस्तु के साथ चिपटे रहना, उसे छोड़ने के लिए तैयार न होना। इस बात को ध्यान में रखते हुए ‘अस्तेय’ का अर्थ है—दूसरे की वस्तु को हाथ न लगाना, उसे जोर-जबर्दस्ती या छल-कपट से पाने का प्रयत्न न करना; ‘अपरिग्रह’ का अर्थ है—अपनी वस्तु को भी यथासम्भव त्यागने का प्रयत्न करना। चोरी दूसरे की वस्तु की होती है, छोड़ना अपनी वस्तु का होता है। ‘अस्तेय’ की कोई प्रशंसा नहीं करता। कोई कहे कि मैं चोरी नहीं करता, तो यह कोई बड़ी प्रशंसा की बात नहीं है। चोरी करनी ही नहीं चाहिए, परन्तु अगर

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
 कोई कहे कि मैं अपनी वस्तु का भी त्याग करता हूँ, तो यह प्रशंसा की बात है। इस दृष्टि से अपरिग्रह अस्तेय से ऊँची भावना है। अपरिग्रह का अर्थ है—त्याग, संसार के बन्धनों से निकलना, धन-दौलत में डूबे न रहना, सांसारिक बन्धनों में जकड़े न रहना, जो-कुछ समेटा हुआ है, उसे छोड़ने के लिए तैयार रहना।

६. इक्कीसवीं पीढ़ी का क्या होगा ?—हम लोग अपने धन-दौलत से कितने बँधे हुए हैं। अपने लिए ही नहीं कमाते, अपनी हर पीढ़ी के लिये धन जोड़ कर रख देना चाहते हैं मानो वे सब निकम्मे होंगे, उनके लिये हमें अभी से जोड़ रखना चाहिए। एक सेठ थे। उनके पास असीम धन-सम्पत्ति थी। उन्हें पता ही नहीं था कि उनके खजाने में कितना धन है। अपने मुनीम को बुला कर उन्होंने पूछा—मुनीम जी, हमारी सम्पत्ति का हिसाब लगाकर बताओ, कितना धन हमारे पास है ? मुनीम ने पूरा हिसाब लगाया, कहा—सेठजी, आपके पास इतनी धन-दौलत है कि आपकी २० पीढ़ियाँ कुछ न करें तो भी बड़े आराम से जिन्दगी बिता सकेंगी ! सेठ जी को यह सुनकर शॉक लगा, वे बीमार पड़ गये। बीमारी में बोलते रहे—हाय, २१ वीं पीढ़ी का क्या होगा ? अपरिग्रह का अर्थ है—हम यह सोचना छोड़ दें कि २१वीं पीढ़ी का क्या होगा। हम धन-दौलत बटोरने में इतना लगे हुए हैं कि हर-किसी को २१वीं पीढ़ी की चिन्ता सताये जा रही है।

७. जीवन का नियम भोग नहीं, त्याग है—परिग्रह का अर्थ सिर्फ रुपये-पैसे को जोड़ना ही नहीं, किसी भी प्रकार की वस्तु को पाकर उसे छोड़ने के लिए तैयार न होना परिग्रह है। जीवन का नियम छोड़ना है, छोड़ना है, त्यागना है, त्यागना है। इसलिये भी त्यागना जीवन का नियम है क्योंकि अन्त में सभी-कुछ त्याग कर ही हमें चल देना है।

हम जोड़ने में इतने रम जाते हैं कि जोड़ते-जोड़ते स्वास्थ्य भी खो देते हैं। चार्ली चैपलिन ने बड़ा धन संग्रह किया था। जब वह अपनी माँ से मिलने गया, तो माँ ने कहा—बेटा, सुना है तुम असीम सम्पत्ति जोड़ चुके हो, मुझे आशा है—You will be healthy enough to enjoy that wealth—सम्पत्ति तो जुड़ जायगी, तुम उसे भोगने लायक स्वास्थ्य रख सकोगे या नहीं, कहीं ऐसा तो नहीं होगा कि सम्पत्ति का संग्रह करते-करते तुम उसे भोगने लायक ही न रहो।

धन-सम्पत्ति पाकर सुख ही मिलता है, यह बात गलत है। उलटे जितना धन होता है, इन्सान ऐशोआराम में, विलासिता में उसे खोकर बीमारियाँ सहेज लेता है। जब बीमारियाँ आ घेरती हैं तब पैसा धरा रह जाता है। डॉ० जान वेडेनोक ने इंग्लैंड के राजाओं के जीवन का अध्ययन करके एक ग्रन्थ लिखा है। वे लिखते हैं : जेम्स प्रथम (१५६६-१६२५) को सदा दस्त लगे रहते थे, नाक बहती रहती थी। जो-कुछ पास देखता था उसी से नाक पोंछा करता था। हर

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
 समय खुजाया करता था, ज्वर का दौर आया और मर गया। महारानी एनी (१६६५-१७१४) को हर समय पेट में दर्द बना रहता था, अंग-प्रत्यंग अत्यन्त कमजोर रहते थे, गठियों का दर्द कभी इधर, कभी उधर चला-फिरा करता था, शरीर में अचानक कंपन तथा ऐंठन उठी और उसका देहान्त हो गया। चार्ल्स द्वितीय (१६३०-१६८५) को मलेरिया कभी छोड़ता न था, उसे फिट पड़ते थे। डॉक्टरों ने इन दौरों को रोकने के लिए ५०० मिलीलीटर उसका खून निकाला। जब दोरे बढ़ने लगे तब उसकी नस काट डाली, सिर पर जलते कोयलों से दाह किया, उल्टियाँ कराई, दस्त कराये। इन सब के पास धन-दौलत की क्या कमी थी ! किन्तु मनुष्य धन-दौलत, रुपये-पैसे के पीछे अपनी जान कुर्बान कर देता है, पैसे का पीछा, जो उसके साथ किसी हालत में नहीं जा सकता, नहीं छोड़ता।

८. रामचन्द्र जी ने लंका को जीत कर लंका वालों को ही दे दिया—आज हमें जो ओहदा मिल जाता है, उसके साथ हम ऐसे जुड़ जाते हैं कि डेमोक्रेसी का नाम लेते हुए भी एकाधिकार बनाये रखना चाहते हैं। सभा-सोसाइटियों में जो एक बार मंत्री-प्रधान बन जाते हैं वे फिर कुर्सियों से चिपक जाते हैं, छोड़ने को तैयार ही नहीं होते। नियम बनाने पड़ते हैं कि जो तीन बार प्रधान या मंत्री बन चुका हो, वह फिर अगली बार नहीं बन सकता, परन्तु जो एक बार बन गया, वह आजीवन उस उस पद पर बना रहना चाहता है।

रामचन्द्र जी को आज राज दिया जाना था। राजतिलक की तैयारी हो रही थी। अगले दिन उन्हें सूचना दी गई कि राज देने के बजाय अब निर्णय किया गया है कि आप १४ साल वनवास में रहें। महर्षि वाल्मीकि ने रामायण में लिखा है :

आहूतस्याभिषेकाय प्रस्थितस्य वनाय च ।

न मया लक्षितस्तस्य स्वल्पोप्याकार विभ्रमः ॥

राज्य लेते हुए और राज्य छोड़ते हुए रामचन्द्र जी के मुख पर कोई भेद नहीं आया। राजगद्दी पर चढ़ने का समाचार सुनकर वे आसमान पर नहीं चढ़ गये, राज्य प्राप्त करने की जगह १४ साल जंगल जाने की बात सुन कर वे हाय-तोबा नहीं मचाने लगे।

रामचन्द्र जी ने लंका को जीता। जीतने के बाद रावण के भाई विभीषण को ही लंका का राज्य सौंप कर घर लौट आये। इसे अपरिग्रह कहते हैं।

(च) उपसंहार

(क) हमारे सामने दो संस्कृतियाँ हैं—भौतिकवादी संस्कृति तथा आध्यात्मवादी संस्कृति। भौतिकवादी संस्कृति का विकास यूरोप में हुआ है, आध्यात्मवादी

संस्कृतिक विकास का भारत में हुआ है। आध्यात्मिकता की संस्कृति को आधारित है, आध्यात्मवादी-संस्कृति त्याग पर आधारित है। त्याग पर आधारित इस वैदिक संस्कृति के पाँच आधार-स्तम्भ हैं जिन्हें पतंजलि ने अपने 'योगदर्शन' में अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह नाम से कहा है।

- (ख) भौतिकवादी संस्कृति ग्रीस में उत्पन्न हुई और सारे युरोप में छा गई, त्यागवादी संस्कृति को भारत ने जन्म दिया और इस संस्कृति का एशिया में भारत अग्रगण्य रहा। भौतिकवादी संस्कृति बढ़ते-बढ़ते 'वर्तमान तकनीकी विज्ञान' (Modern technology) के रूप में विकसित हुई, जिसका उद्देश्य आवश्यकताओं को बढ़ाना और उन्हें पूरा करने के लिए भिन्न-भिन्न वैज्ञानिक आविष्कार करना है। त्यागवादी संस्कृति का आधार त्याग, तपस्या, आवश्यकताओं को घटाना है। आवश्यकताओं को बढ़ाने का अर्थ है—भौतिक पदार्थों तथा धन का संग्रह करना; आवश्यकताओं को घटाने का अर्थ है—भौतिक पदार्थों तथा धन का संग्रह करने में न लगे रहना; संग्रह का अर्थ है—परिग्रह, संग्रह न करने का अर्थ है—अपरिग्रह। कभी अपार धनी जे० डी० आर० टाटा ने लिखा था :

“Conspicuous consumption of a few individuals heading large enterprises in their pursuit of wealth, profit and self-aggrandisement have wantonly dis-regarded the public interest. Austerity, self-control and self discipline—the essence of our culture—are being overtaken by a race for the accumulation of wealth and acquisitive spirit.”

“कुछ थोड़े-से चुनींदा व्यक्ति, जो बड़े-बड़े उद्योगों के स्वामी हैं, धन तथा भोग्य पदार्थों की फ़िजूलखर्ची इसलिये करते हैं ताकि लोग उनकी तरफ़ आँखें फाड़-फाड़ कर देखें और कहें कि कितना धन इनके पास है। त्याग, तपस्या, आत्म-संयम जो भारत की संस्कृति की आत्मा हैं उनको तिलांजलि देते हुए ये लोग धन-संग्रह की दौड़ में लगे हुए हैं।”

भारत में दो विचारधाराओं का टकराव हो रहा है। एक विचार-धारा तो यह है कि हमें पुराने विचार छोड़ कर पश्चिम का खुल कर अनुसरण करना चाहिए—वेशभूषा में, खान-पान में, रहन-सहन में, व्यापार-उद्योग में पुरानी लकीर पीटना छोड़ कर जिस दिशा में युरोप जा रहा है उसी दिशा में चलना चाहिए; दूसरा विचार यह है कि हमें अपनी विचार-धारा को—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह—को आदर्श समझ कर उसी दिशा में चलना चाहिए।

उसे क्या मिला—क्या उसे सुख-चैन मिला, शान्ति मिली, सन्तोष मिला ? या हम उस दिशा की तरफ चले जिस पर चलने के लिए ऋषि-मुनि इशारा करते रहे हैं—जिस पर चलने से शान्ति मिलती है, सन्तोष मिलता है।

भारत के ऋषि-मुनियों का सन्देश निरा त्याग का, दुनिया छोड़ देने का सन्देश नहीं है, यह सन्देश दुनिया को किसी ऊँचे उद्देश्य के लिए साधन बना लेने का है। नाली को पार करने के लिए बीच में पड़े पत्थर पर पाँव रखकर उसके पार जाना है, नदी के परले किनारे पर जाने के लिए नाव पर चढ़ना है, पर नाव पर बैठे नहीं रहना। संसार का सब-कुछ एक सहारा है, साधन है। पत्थर पर चढ़ कर छलाँग लगानी है, नाव पर बैठ कर पार उतरना है, सीढ़ी पर चढ़ कर छत पर चढ़ना है; पत्थर हमारे गले का बोझ न बन जाय, नाव में बैठने के स्थान में नाव हम में न बैठ जाय, सीढ़ी से ऊपर चढ़ने के स्थान में सीढ़ी हमें न पकड़ ले, संसार को भोगने के स्थान में संसार हमें न भोगने लगे—यह ऋषियों का दृष्टिकोण है। वर्तमान तकनीकी विज्ञान (Modern technology) इसमें सहायक हो, तो इसका स्वागत है, परन्तु अगर यह हमारे 'सांस्कृतिक मूल्यों' (Cultural values) को ही उखाड़ फेंके तो यह परे फेंक देने के योग्य है।

- (ग) हिमालय की उन कन्दराओं में से, जहाँ कभी तपस्वी लोग भौतिकवाद में डूबी हुई दुनिया को शान्ति का सन्देश दिया करते थे, आज भी बावली दुनिया के लिए एक गूँज सुनाई दे रही है—मारने के स्थान में दूसरों को बचाने के लिए मरना सीखो ! भूठ, बेईमानी तथा मक्कारी के स्थान में सच, ईमानदारी सीखो ! दूसरों का माल हड़पने के स्थान में सन्तोष सीखो ! उच्छृंखलता तथा विषयों के भोगों में डूबने के स्थान में संयम सीखो ! दुनिया से चिपटने के बजाय उससे अलग-अलग के साथ रहना सीखो !

ऋषियों का यह सन्देश, जब से सृष्टि ने सोचना शुरू किया आसमान में गूँज रहा है। देखना यह है कि कौन इसे सुनता है, कौन इसे सुनते हुए भी अनसुना कर देता है।

वैदिक विचारधारा का वैज्ञानिक आधार

लेखक : डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

इस पुस्तक में वैदिक आध्यात्म को विज्ञान की कसौटी पर कसकर उसे परखने का प्रयत्न किया गया है ताकि हमारी नई पीढ़ी जिन मान्यताओं को अवैज्ञानिक कहकर छोड़ती जा रही है, उन पर नई दृष्टि से सोचने का प्रयत्न करें।

मूल्य : ₹५०.०० रु०

हमारे प्रकाशन

महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती		स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती	
आनन्द गायत्री कथा	१४.००	सत्यार्थ प्रकाश	
एक ही रास्ता	१४.००	(आधुनिक हिन्दी रूपान्तर)	१२५.००
शंकर और दयानन्द	८.००	महाभारतम् (तीन खण्ड)	६००.००
मानव जीवन-गाथा	१४.००	वाल्मीकि रामायण	१७५.००
सत्यनारायण व्रत कथा	६.००	पङ्दर्शनम्	१५०.००
भक्त और भगवान	१२.००	चाणक्यनीति दर्पण	६०.००
उपनिषदों का सन्देश	१८.००	विदुरनीति: (हिन्दी-संस्कृत-अंग्रेजी)	४०.००
घोर घने जंगल में	२२.००	ब्रह्मचर्य गौरव	९.००
मानव और मानवता	३२.००	विद्यार्थियों की दिनचर्या	९.००
प्रभु मिलन की राह	२२.००	कुछ करो कुछ बनो	१२.००
यह धन किसका है ?	२२.००	मर्यादा पुरुषोत्तम राम	१२.००
बोध-कथाएँ	२०.००	आदर्श परिवार	१८.००
दो रास्ते	१७.००	दयानन्द सूक्ति और सुभाषित	२५.००
दुनिया में रहना किस तरह	१७.००	वैदिक विवाह पद्धति	१५.००
तत्त्वज्ञान	२२.००	ऋग्वेद सूक्ति सुधा	२५.००
प्रभु-दर्शन	१७.००	अथर्ववेद सूक्ति सुधा	१५.००
प्रभु-भक्ति	१२.००	सामवेद सूक्ति सुधा	१२.००
महामन्त्र	१४.००	ऋग्वेद शतकम्	१०.००
सुखी गृहस्थ	७.००	यजुर्वेद शतकम्	१०.००
त्यागमयी देवियाँ	९.००	सामवेद शतकम्	१०.००
महात्मा आनन्द स्वामी (जीवनी)	२५.००	अथर्ववेद शतकम्	१०.००
MAHATMA ANAND SWAMI		भक्ति संगीत शतकम्	६.००
Anand Gayatri Katha	30.00	चमत्कारी औपधियाँ	१५.००
The Only Way	30.00	घरेलू औपधियाँ	१५.००
Bodh-Kathayen	40.00	चतुर्वेद शतकम् (सजिल्द)	५०.००
How To Lead Life?	30.00	स्वर्ण पथ	१२.००
महर्षि दयानन्द		प्रभात-वन्दन	८.००
व्यवहारभानु	४.००	प्रार्थना-प्रकाश	८.००
स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश	१.५०	शिवसंकल्प	८.००
आर्योद्देश्यरत्नमाला	१.५०	प्रार्थना लोक (सजिल्द)	४०.००
मंचमहायज्ञ विधि:	८.००	प्रार्थना-वन्दन, प्रार्थना-प्रकाश व शिवसंकल्प एकसाथ)	
ब्र. जगन्नाथ पथिक		वेद सौरभ	१२.००
सन्ध्या योग ब्रह्म साक्षात्कार	१२५.००		
(वैदिक सन्ध्या से आलोक-प्राप्ति की पद्धति)			

आचार्य उदयवीर शास्त्री		डॉ. भवानीलाल भारतीय	
न्यायदर्शन भाष्य	१५०.००	बिखरे मोती (आर्य महापुरुषों के संस्मरण व	
वैशेषिकदर्शन भाष्य	१५०.००	शास्त्रार्थों की नोक-झोंक)	४०.००
सांख्यदर्शन भाष्य	१२५.००	स्वामी श्रद्धानन्द ग्रन्थावली (११ खण्डों में)	
योगदर्शन भाष्य	१००.००	(सम्पूर्ण कृतित्व व जीवनी)	६६०.००
वेदान्तदर्शन भाष्य (ब्रह्मसूत्र)	१८०.००	आर्य समाज के बीस बलिदानों	१५.००
मीमांसादर्शन का विद्योदय भाष्य	३५०.००	श्याम जी कृष्ण वर्मा (जीवनी)	२४.००
सांख्यदर्शन का इतिहास	२५०.००	आर्य समाज विषयक साहित्य	
सांख्य सिद्धान्त	२००.००	परिचय	२५.००
वेदान्तदर्शन का इतिहास	२००.००	स्वामी वेदानन्द सरस्वती	
प्राचीन सांख्य सन्दर्भ	१००.००	ऋषि बोध कथा	१०.००
वीर तरंगिणी (लेखों का संग्रह)	२५०.००	वैदिक धर्म	२५.००
स्वामी विद्यानन्द सरस्वती		सुरेशचन्द्र वेदालंकार	
On The Vedas	35.00	सहेलियों की वार्ता	२०.००
दीप्ति: (विवादास्पद लेखों का संग्रह)	८०.००	ले: देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय	
आदि शंकराचार्य वेदान्ती नहीं थे	४०.००	अनु: पं. घासीराम	
सृष्टि विज्ञान और विकासवाद	४०.००	महर्षि दयानन्द चरित	२५०.००
पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय		(प्रामाणिक-अनूठा जीवन-चरित्र)	
सन्ध्या : क्या, क्यों, कैसे	१५.००	क्षितीश वेदालंकार	
विवाह और विवाहित जीवन	१८.००	चयनिका (चुने हुए लेखों का संग्रह)	१२५.००
जीवात्मा	४०.००	पं. रामनाथ वेदालंकार	
भगवत् कथा (उपनिषदों के आधार पर)	१४.००	वैदिक मधुवृष्टि (निबन्ध संग्रह)	६०.००
प्रो. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार		आ. प्रियव्रत वेदवाचस्पति	
ब्रह्मचर्य सन्देश	२५.००	वेदोद्यान के चुने हुए फूल	५०.००
वैदिक विचारधारा का		(वेद-मन्त्रों व सूक्तों का संग्रह)	
वैज्ञानिक आधार	१५०.००	पं. चन्द्रभानु सिद्धान्तभूषण	
प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु		महाभारत सूक्ति सुधा	४०.००
वैदिक ज्ञान-धारा (लेखों का संग्रह)	८०.००	पं. विश्वनाथ विद्यालंकार	
महात्मा हंसराज (जीवनी)	६०.००	सन्ध्या रहस्य	२५.००
महात्मा हंसराज ग्रन्थावली (११ खण्ड)	२४०.००	प्रो. रामविचार एम.ए.	
(सम्पूर्ण व्यक्तित्व व कृतित्व)		आर्य समाज का कार्याकल्प कैसे हो ?	४.००
आर्य सूक्ति सुधा	१२.००	पं. नन्दलाल बानप्रस्थी	
(आर्य विद्वानों की सूक्तियाँ)		गीत सागर (अनेक कवियों के	
प्रो. नित्यानन्द पटेल		गीत-भजनों का संग्रह)	२५.००
पूर्व और पश्चिम	३५.००		
सन्ध्या विनय	६.००		

पं. वीरसेन वेदश्रमी

याज्ञिक आचार संहिता ४५.००

वैदिक सम्पदा (वैदिक वाङ्मय के आधार पर मानवीय जीवन का विवेचन) १७५.००

नरेन्द्र विद्यावाचस्पति

प्रेरक बोध कथाएँ १५.००

पं. सत्यपाल विद्यालंकार

श्रीमद्भगवद्गीता १५.००

WORKS OF SVAMI
SATYA PRAKASH SARASVATI

Founders of Sciences in

Ancient India (Two Vols.) 800.00

Coinage in Ancient India

(Two Vols.) 600.00

Geometry in Ancient India 350.00

Brahmgupta and His Works 350.00

The Critical, Cultural Study of

Satapath Brahman In Press

Speeches, Writings and Addresses

Vol. I : VINCIT VERITAS 150.00

Vol. II : ARYA SAMAJ : A

RENAISSANCE 150.00

Vol. III : DAYANAND : A

PHILOSOPHER 150.00

Vol. IV : THREE LIFE

HAZARDS 150.00

चित्र

स्वामी दयानन्द (कुर्सी) १८" X २२" ३.००

स्वामी दयानन्द (आसन) १८" X २२" ३.००

स्वामी श्रद्धानन्द १८" X २२" एक रंग ३.००

गुरु विराजानन्द १८" X २२" एक रंग ३.००

पण्डित लेखराम १८" X २२" एक रंग ३.००

स्वामी दर्शनानन्द १८" X २२" एक रंग ३.००

गुरुदत्त विद्यार्थी १८" X २२" एक रंग ३.००

महात्मा हंसराज १८" X २२" एक रंग ३.००

स्वास्थ्य

जब प्रकृति की अनमोल दवाइयाँ आपको

उपलब्ध हों तो पुड़िया आदि की क्या जरूरत है।

घर का वैद्य—प्याज ७.००

घर का वैद्य—लहसुन ७.००

घर का वैद्य—गन्ना ७.००

घर का वैद्य—नीम ७.००

घर का वैद्य—सिरस ७.००

घर का वैद्य—तुलसी ७.००

घर का वैद्य—आंवला ७.००

घर का वैद्य—नींबू ७.००

घर का वैद्य—पीपल ७.००

घर का वैद्य—आक ७.००

घर का वैद्य—गाजर ७.००

घर का वैद्य—मूली ७.००

घर का वैद्य—अदरक ७.००

घर का वैद्य—हल्दी ७.००

घर का वैद्य—बरगद ७.००

घर का वैद्य—दूध-घी ७.००

घर का वैद्य—दही-मट्ठा ७.००

घर का वैद्य—हींग ७.००

घर का वैद्य—नमक ७.००

घर का वैद्य—बेल ७.००

घर का वैद्य—शहद ७.००

घर का वैद्य—फिटकरी ७.००

घर का वैद्य—साग-भाजी ७.००

घर का वैद्य—अनाज ७.००

घर का वैद्य—फल-फूल ७.००

घर का वैद्य—धूप-पानी १५.००

सभी पच्चीस पुस्तकें पाँच आकर्षक

जिल्दों में भी उपलब्ध, कीमत ४५.००

रुपये प्रत्येक

घर का वैद्य (प्याज, लहसुन, गन्ना, नीम, सिरस)

घर का वैद्य (तुलसी, आंवला, नींबू, पीपल, आक)

घर का वैद्य (गाजर, मूली, अदरक, हल्दी, बरगद)

घर का वैद्य (दूध-घी, दही-मट्ठा, हींग, नमक, बेल)

घर का वैद्य (शहद, अनाज, साग-भाजी, फल-फूल, फिटकरी)

घर का वैद्य—धूप-पानी ४०.००

बालोपयोगी

हरिश्चन्द्र विद्यालंकार		त्रिलोकचन्द विशारद	
वैदिक शिष्टाचार	३.००	महर्षि दयानन्द	५.००
पं. रामगोपाल विद्यालंकार		गुरु विरजानन्द	५.००
दयानन्द चित्रावली	२५.००	स्वामी श्रद्धानन्द	५.००
(अनेक बहुरंगी चित्रों से सुसज्जित)		धर्मवीर पं. लेखराम	५.००
ब्र. नन्दकिशोर		मुनिवर पं. गुरुदत्त	५.००
आचार्य गौरव	५.००	स्वामी दर्शनानन्द	५.००
पं. नारायण स्वामी		प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु	
प्राणायाम विधि	२.५०	महात्मा हंसराज	४.५०
सत्यभूषण वेदालंकार एम.ए.		स्वामी स्वतन्त्रानन्द	४.५०
नैतिक शिक्षा—प्रथम	२.५०	महात्मा नारायण स्वामी	५.५०
नैतिक शिक्षा—द्वितीय	३.००	देवतास्वरूप भाई परमानन्द	५.५०
नैतिक शिक्षा—तृतीय	४.५०	सुनील शर्मा	
नैतिक शिक्षा—चतुर्थ	५.५०	हमारे बालनायक	९.००
नैतिक शिक्षा—पंचम	५.५०	देश के दुलारे	९.००
नैतिक शिक्षा—षष्ठ	६.००	हमारे कर्णधार	९.००
नैतिक शिक्षा—सप्तम	६.००	नीरू शर्मा	
नैतिक शिक्षा—अष्टम	६.००	आदर्श महिलाएँ	१०.००
नैतिक शिक्षा—नवम	९.००	स्वामी दर्शनानन्द	
नैतिक शिक्षा—दशम	९.००	कथा पच्चीसी	९.००
डॉ. देवव्रत आचार्य		बाल शिक्षा	२.५०
योग शिक्षा-१	१२.००	नरेन्द्र गुप्ता	
योग शिक्षा-२	१०.००	सच का फल	८.००
योग शिक्षा-३	१०.००	(कथाएँ उपनिषद् की)	
योग शिक्षा-४	१०.००	डॉ. मनोहर लाल	
कर्म काण्ड की पुस्तकें		जीने का सही ढंग (प्रेरक बोध कथाएँ)	८.००
आर्य सत्संग गुटका	४.००	डॉ. कृष्ण वल्लभ पालीवाल	
पंचयज्ञ प्रकाशिका	१०.००	वैदिक राष्ट्रीय ऋचाएँ	१२.००
वैदिक संध्या	१.००	जीवनी	
सामाजिक पद्धतियाँ (मदनजीत आर्य)	१२.००	महात्मा आनन्द स्वामी (उर्दू)	१०.००
संध्या-हवन-दर्पण (उर्दू)	८.००	आ. उदयवीर शास्त्री	
		आचार्य शंकर का काल	१०.००
		पं. वा. विष्णुदयाल (मॉरीशस)	
		वेद भगवान बोले	१५.००

अन्य प्रकाशन

डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार

आर्य समाज का इतिहास (भाग १)	३२५.००
आर्य समाज का इतिहास (भाग २)	३२५.००
आर्य समाज का इतिहास (भाग ३)	३२५.००
आर्य समाज का इतिहास (भाग ४)	३२५.००
आर्य समाज का इतिहास (भाग ५)	३२५.००
आर्य समाज का इतिहास (भाग ६)	३२५.००
प्राचीन भारतीय इतिहास का वैदिक युग	५६.००
दक्षिणी-पूर्वी और दक्षिणी एशिया	
में भारतीय संस्कृति	५८.००
पूर्वी और दक्षिणी-पूर्वी एशिया का	
आधुनिक इतिहास	७७.००
प्राचीन भारत का धार्मिक सामाजिक	
और आर्थिक जीवन	७२.००
मध्य एशिया व चीन में भारतीय संस्कृति	५८.००
प्राचीन भारत	८०.००
भारतीय संस्कृति का विकास	७७.००
प्राचीन भारत की शासन संस्थाएँ और	
राजनीतिक विचार	५८.००
एशिया का आधुनिक इतिहास	१३०.००
यूरोप का इतिहास	१४०.००
समाजशास्त्र	८०.००
चाणक्य	६५.००
मौर्य साम्राज्य का इतिहास	१३५.००
भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास	५८.००
भारत का इतिहास	५५.००
विश्व की प्राचीन सभ्यताएँ	१७५.००
मध्यकालीन भारत	५८.००
प्राचीन भारत का सांस्कृतिक	
इतिहास	३२५.००
Political Thought of	
Swami Dayanand	150.00

डॉ. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

एकादशोपनिषद्	१२५.००
उपनिषद् प्रकाश	११०.००
श्रीमद्भगवद्गीता	१०५.००
संस्कार चन्द्रिका	१२०.००
बुढ़ापे से जवानी की ओर	९५.००
होमियोपैथिक चिकित्सा	१२५.००
होमियोपैथिक चित्रण	१२५.००
होमियोपैथी का क ख ग	१००.००
होमियोपैथी के मूल सिद्धान्त	८०.००
वैदिक संस्कृति के मूल नत्त्व	४०.००
From old age to youth	
through Yoga	80.00
चतुर्वेद गंगालहरी	९५.००
मेरी नानी की कहानी	३५.००
माँ और बच्चा	२५.००
महर्षि दयानन्द	
सत्यार्थ प्रकाश	५०.००
संस्कार विधि	१०.००
ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका	४०.००
उपदेश मञ्जरी	१०.००
संस्कृत वाक्य प्रबोध	५.००
महर्षि दयानन्द (पं. लेखराम)	१००.००
Teachings of Gita	75.00
Light of Truth	125.00
Aryoudeshya Ratanmala	10.00
पं. भगवद्दत्त	
सविता देवता	५८.००
बृहस्पति देवता	६५.००
पं. सुरेन्द्र कुमार	
मनुस्मृति	१८०.००

स्वाध्याय और अभ्युदय के लिए पठनीय दो ग्रन्थ

सन् १९९५ में 'सन्ध्या योग-ब्रह्म साक्षात्कार' शीर्षक से एक ग्रन्थ सर्वप्रथम साधना और लगन से प्रस्तुत किया था। प्राचीन काल में कतिपय साधनाओं में गति प्राप्त करने के बाद तपःपूत ऋषियों ने ब्रह्म यज्ञ और वैदिक सन्ध्या के दिव्य अनुष्ठान की प्रणाली का विकास किया था। साधन समुच्चय और अष्टांग योग की वैज्ञानिक साधना द्वारा उसे किस प्रकार सिद्ध किया जा सकता है, जिससे क्लेश कर्मों का नाश कर अध्यात्म-आलोक की प्राप्ति सम्भव है। उसी की साधना समुच्चय को अष्टांग योग-प्रणाली के माध्यम से विस्तारपूर्वक अपनाने की पद्धति प्रस्तुत ग्रन्थ में एक निष्ठावान् उपासक की साधना के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है।

वैदिक वाङ्मय के आधार पर मानवीय जीवन और आचार को एक व्यवस्थित रूप देने के लिए वैदिक विद्वान् पण्डित वीरसेन वेदश्रमी के 'वैदिक सम्पदा' शीर्षक ग्रन्थ में से एक जिज्ञासु साधक को अपने स्वाध्याय और अभ्युदय के लिए पर्याप्त ज्ञान-सामग्री उपलब्ध हो सकती है। इस ग्रन्थ में आत्मा-परमात्मा का बोध करने के लिए अध्यात्म की भूमिका मानव को समझनी चाहिए। उसके अध्ययन-मनन के बाद समाज-शास्त्र के सम्बन्ध में वैदिक पारिवारिक आदर्श प्रस्तुत किया गया है। वैदिक परिवार में गृहस्थ, परिवार की समस्याओं-गृहनिर्माण आदि की भूमिका प्रस्तुत करने के बाद स्वावलम्बन के लिए जीविका निर्वाह के लिए कृषि, उद्योग धन्धों, वन एवं यातायात की समस्याओं का चिन्तन किया गया है। वनों से औषधि, रोग ज्ञान, शल्य चिकित्सा, अर्थशास्त्र आदि विविध मानवीय कल्याण की चर्चा करने के बाद अर्थशास्त्र और राजनीति आदि सभी विषयों के उल्लेख के साथ शिक्षा विज्ञान, पदार्थ विज्ञान आदि की समस्याओं और उनका समाधान वैदिक सम्पदा ग्रन्थ के अनुशीलन से जिज्ञासु प्राप्त कर सकता है। आधुनिकतम ज्ञान-विज्ञान की तुलना में प्राचीन वैदिक सम्पदा का अध्ययन करने वाले जिज्ञासुओं के लिए ग्रन्थ उपयोगी है।

समीक्षित पुस्तकें—

१. सन्ध्यायोग-ब्रह्म साक्षात्कार : लेखक-ब्रह्मचारी जगन्नाथ पथिक
पृष्ठ सं० २३९, मूल्य १२५ रुपये।
२. वैदिक सम्पदा : लेखक-श्री वीरसेन वेदश्रमी
पृष्ठ सं० ४८०, मूल्य १७५ रुपये।

दोनों ही ग्रन्थ सजिल्द हैं। दोनों के ही प्रकाशक हैं—

विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द ४४०८, नई सड़क, दिल्ली-६

अक्तूबर १९९६ वेदप्रकाश

R.No. 622/57 Regd. No. DL - 12026/96

☆ नये प्रकाशन ☆

१. ऋग्वेद संहिता : ऋग्वेद मूल, शुद्ध संस्करण, दो रंगों में, बढ़िया कागज, सुन्दर छपाई व मजबूत जिल्द। मूल्य : ३००.०० रु०
२. आर्यसमाज : एक चिन्तन : आर्य बुद्धिजीवी सम्मेलन में प्रस्तुत विचारों का संकलन, इसमें आर्यसमाज की सभी ज्वलन्त समस्याओं पर विचार किया गया है। मूल्य : १२५.०० रु०
३. उपनिषदों की कथाएँ : डॉ० भवानीलाल भारतीय उपनिषत्कार अपने सिद्धान्तों को स्पष्ट करने के लिए विभिन्न आख्यानों और कथाओं का सहारा लेते हैं। इन्हीं कथाओं को बोधगम्य व सरल भाषा में प्रस्तुत किया गया है। मूल्य : ५०.०० रु०
४. ऋषि दयानन्द कीर्तिगान : पं० नारायणप्रसाद बेताब : ऋषि दयानन्द के जीवन के विविध प्रसंगों को लेकर उर्दू की मुसद्दस शैली में चार काव्यों का संकलन। मूल्य : ८.०० रु०
५. नैतिक जागरण (पांच भाग) : नैतिक व्यवहार से चरित्र की पहचान बनती है। प्रस्तुत हैं कुछ ऐसे पाठ, जिन्हें सभी माता-पिता और गुरुजन अपने बच्चों या छात्रों को देना चाहेंगे । मूल्य : १०.०० रु० प्रत्येक
६. माँ का ऋण (शिष्टाचार की कहानियाँ) मौन का फल (सदाचार की कहानियाँ) : यदि हमारे व्यवहार में सदाचार और शिष्टाचार का भाव होगा तो हमारी सब प्रशंसा करेंगे, हमें जीवन जीने की सही राह मिलती जाएगी। मूल्य : १०.०० रु० प्रत्येक
७. जीने का सही ढंग (प्रेरक बोध कथाएँ) : बालोपयोगी कथाओं का संकलन। मूल्य : ८.०० रु०
८. सच का फल (उपनिषत् की कथाएँ) : उपनिषदों की कथाएँ सरल व रोचक शैली में प्रस्तुत। मूल्य : ८.०० रु०
९. उपनिषत् सूक्ति-सुधा : सं० ज्ञानचन्द शास्त्री
३४ विभिन्न विषयों पर २०० से अधिक सूक्तियाँ। मूल्य : ६.००

प्रकाशक-मुद्रक अजयकुमार ने सम्पादित कर अजय प्रिण्टर्स, दिल्ली-३२ में मुद्रित करा वेदप्रकाश कार्यालय, ४४०८७ नई दिल्ली, दिल्ली प्रसारित किया।
Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi